शिव-पूजा-विधान

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्

...कार
...में शिव
...त्यादि बृहद्दा-

शिवप्रसादमाहात्म्यम् ।

प्रसादलाभाय हि धर्मसंचयः
प्रसादलाभाय हि देवतार्चनम् ।
प्रसादलाभाय हि देवतास्मृतिः
प्रसादलाभाय हि सर्वमीरितम् ॥१॥

शिवप्रसादेन विना न भुक्तयः
शिवप्रसादेन विना न मुक्तयः ।
शिवप्रसादेन विना न देवताः
शिवप्रसादेन हि सर्वमास्तिकाः ॥२॥

शिवप्रसादेन समो न विद्यते
शिवप्रसादादधिको न विद्यते ।
शिवप्रसादेन शिवस्य सन्निधिः
शिवप्रसादेन विशुद्धताऽऽत्मनः ॥३॥

शिवप्रसादेन युतस्य वैदिकं
न विद्यते कर्म जनस्य सुव्रताः ।
शिवप्रसादेन युतस्य तान्त्रिकं
न विद्यते कर्म तथैव किंचन ॥४॥

शिवप्रसादेन युतस्य सुव्रता
न जन्मनाशौ भवतः सदैव तु ।
शिवप्रसादेन युतः स्वयं शिवः
शिवप्रसादस्तु शिवप्रसादतः ॥५॥

(सूतसंहिता)

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

❁ प्रस्तावना ❁

अवियोगोऽस्तु मे देव त्वदङ्घ्रियुगलेन वै।
एष एव वरः शम्भो नान्यं कञ्चिद्वरं वृणे ॥

सम्पूर्ण वेदों तथा वेदान्त का सार और परम तत्त्व शिव ही हैं। "ईशानो ज्योतिरव्ययः, एको हि रुद्रो न द्वितीयः, यो देवानां प्रभवोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः" इत्यादि श्रुतियों से सिद्ध होता है कि एक शिव ही अद्वितीय हैं। अथर्वशीर्ष के प्रथम खण्ड में लिखा है—किसी समय देवताओं ने रुद्र से पूछा कि आप कौन हैं ? तब उन्होंने कहा—एक मात्र मैं ही जगत् की उत्पत्ति और पालन करने वाला हूँ। मुझसे अधिक कोई नहीं है। इसी के दूसरे और तीसरे खण्ड में सब देवता शिवजी की विभूति का वर्णन किये हैं। "यो रुद्रो अग्नौ य अप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो विश्वा भुवनाविवेश तस्मै रुद्राय नमोऽस्तु।" अर्थात् जो रुद्र अग्नि, जल, ओषधी और सब संसार में व्याप्त हैं, उनको नमस्कार है। इसी प्रकार रुद्राध्याय में "नमः स्रोतस्याय च" इस मंत्र में भी सब वस्तु में शिव का सद्भाव कहा है। "य एषोन्तर्हृदय आकाश०" इत्यादि बृहदा-

रण्यक के मंत्रों में भी यही कहा है। "अथ यदिदमस्मिन्निति" इसमें शिवको सर्वेश लिखा है। "ब्रह्मविष्ण्वग्निशुक्रार्कजलभूमि-पुरोगमाः ॥ सुराऽसुराः संप्रसूतास्ततः सर्वे महेश्वराः" ब्रह्माण्डपुराण में कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, शुक्र, सूर्य, जल, भूमि आदि सब उन्हीं (शिव) से उत्पन्न हुए हैं। हरिवंश की कैलासयात्रा के प्रसंग में शिवजी ने कहा है—"हे गोविन्द ! जो तुम्हारे नाम हैं, सो मेरे ही हैं" "शिवं प्रस्तुत्य सर्वाणि ह वा एतस्य नामधेयानि" आश्वलायन के इस मंत्र में लिखा है कि शिव की स्तुति करके नामकरण करै। स्कन्दपुराण में लिखा है कि कोई ब्रह्मा, कोई विष्णु, कोई सूर्यादि की मूर्ति की उपासना करते हैं, परन्तु "प्रतिपाद्यो महादेवः स्थितः सर्वासु मूर्तिषु" इस प्रमाण से मूर्तियों में महादेव का प्रतिपादन करना चाहिये, वे ही सब में स्थित हैं। कूर्मपुराण में "गोप्ता चैव जगच्छास्ता शक्तः सर्वो महेश्वरः। यज्ञानां फलदो देवो महादेवनियोगतः" आदि वाक्यों से शिव ही को सब यज्ञ का फलदाता लिखा है। महाभारत के वनपर्व की तीर्थ-यात्रा के प्रसंग में—"ततो गच्छेत्सुवर्णाक्षं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्। यत्र विष्णुः प्रसादार्थं रुद्रमाराधयत्पुरा ॥ वरांश्च सुबहूँल्लेभे दैवतैरपि दुलभान्" अर्थात् फिर सुवर्णाक्ष पर्वत को जाय, जहाँ विष्णु ने शिव की आराधना करके अनेक वर पाये थे; इसी तरह द्रोणपर्व में अश्वत्थामा के लिंगार्चन की कथा है। शांतिपर्व में भीष्म ने कहा है-

"यं विष्णुरिन्द्रः सूर्यश्च तथा लोकपितामहः। स्तुवंति विविधैः स्तोत्रै-र्देवदेवं महेश्वरम् ॥ तमर्चयन्ति ये शश्वद्दुर्गाण्यंतितरन्ति ते" जिनकी ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र और सूर्य स्तुति करते हैं, उन शिवजी का जो पूजन करता है, उसके सब कष्ट दूर हो जाते हैं। फिर अनुशासन पर्व में शिव से ब्रह्मा विष्णु की उत्पत्ति लिखी है। "सोऽसृजद्दक्षिणादं-गाद्ब्रह्माणं लोकभावनम्। वामपार्श्वात्तथा विष्णुमादौ प्रभुरथासृज-त्॥ अप्रज्ञातं जगत्सर्वं तदा ह्येको महेश्वरः" अर्थात् जब कुछ नहीं था, तब एक मात्र शिव थे, इत्यादि बहुत स्थल में शिव को सर्वेश्वर कहा है। हरिवंश में लिखा है कि श्रीकृष्णजी ने शिव की स्तुति कर के वर पाया है। वाल्मीकि में "रौद्राय वपुषे नमः" उत्तरकाण्ड में "ते तु रामस्य तच्छ्रुत्वा नमस्कृत्य वृषध्वजम्" ऐसा कहा है और अश्वमेधप्रकरण में रामचन्द्रजी ने शिवाराधन किया है। यथा-"विशेषाद्ब्राह्मणान्सर्वान् पूजया-मास चेश्वरम्। यज्ञेन यज्ञहंतारमश्वमेधेन शंकरम्॥" और युद्ध-काण्ड में-"अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः।" कहकर शिव का पूजन और शिव की सर्वोत्कृष्टता कही है। भागवत के चौथे स्कंध में दक्ष के यज्ञ में शिव की क्रोधशान्ति की इच्छावाले देवताओं से ब्रह्मा ने कहा है-"नाहं न यज्ञो न च यूयमन्ये ये देहभाजो मुनयश्च तत्त्वम्। विदुः प्रमाणं बलवीर्ययोर्वा तस्यात्मतंत्रस्य कथं विधि-त्सेत्॥" अर्थात् मैं, विष्णु, तुम, ऋषि और मुनि आदि कोई भी उन

शिव की महिमा को नहीं जानते । अष्टम स्कंध में—"न ते गिरित्राखिललोकपालविरिंचिवैकुण्ठसुरेन्द्रगम्यम् । ज्योतिः परं यत्र रजस्तमश्च सत्त्वं न यद्‌ब्रह्मनिरस्तभेदम्" कहा है इससे विष्णु ब्रह्मादि की अपेक्षा शिव की उत्कृष्टता का प्रतिपादन होता है । स्कन्दपुराण में "एषां त्रयाणामधिकः शिवः परमकारणम्" इस वाक्य से तीनों देवताओं से अधिक शिव को कहा है । इसी प्रकार पद्मपुराण में—"यस्यान्तःस्थानि भूतानि यस्मात्सर्वं प्रवर्तते । यदाहुस्तत्परं तत्त्वं स देवः स्यान्महेश्वरः ॥" इत्यादि वाक्यों द्वारा चारों वेदों ने शिव की ही स्तुति की है । विष्णुपुराण में लिखा है कि—"धिक्तेषां धिक्तेषां धिक्तेषां जन्म धिक्तेषाम् । येषां न वसति हृदये कुमतेर्यदा विमोचको रुद्रः ॥" अर्थात् जिनके हृदय में शिवभक्ति नहीं, उनको धिक्कार है । ऋग्वेद में—"अन्तरिच्छन्ति तं जनो रुद्रं परो मनीषया गृभ्णंति जिह्वया ससमिति" पुरुषसूक्त में भी—"उतामृतत्वस्येशान" इस ईशानपद से शिव का ही बोध होता है । इसी प्रकार बौधायनसूत्र में भी "रुद्रो ह्येवैतत्सर्वम्" और आश्वलायन में—"तस्मै शिवाय महते नमः सूक्ष्माक्षरात्मने" इससे शिवकी सर्वोत्कृष्टता कही है । पातञ्जल का भी—"पुरुषविशेष ईश्वरः" "तस्य वाचकः प्रणवः" यह अंश शिव का ही बोधक है । यही वार्ता वायुसंहिता के सातवें अध्याय में लिखी है । कौमुदीकार ने भी सूत्रों को शिवमूलक जानकर शिवका विषय

स्पष्ट किया है। पद्मपुराण के गीतामाहात्म्य में गीता के अठारह अध्याय को नारायण शिव की मूर्ति कहा है। "ईश्वरः सर्वभूतानाम्" और "तमेव शरणं गच्छ" यह वाक्य शिवपरक है। रसेश्वर मुनि ने भी कहा है—"कल्पान्तरे कदाचित्तु दग्ध्वा लोकान्महेश्वरः। सहसैवासृजद्विष्णुं ब्राह्मणं च निजेच्छया॥" अर्थात् शिव ने सृष्टि के आदि में ब्रह्मा और विष्णु को उत्पन्न किया है। इस तरह सब पुराण और धर्मशास्त्रादि में शिवकी उत्कृष्टता लिखी है। फिर विचार के साथ देखने से हरिहर में कोई भेद नहीं पाया जाता। इससे बुद्धिमान् लोग इनको शास्त्रानुसार एक ही रूप मानते हैं। आगे लिखे प्रमाणों से यह बात और भी स्पष्ट हो जायगी कि शिवजी की उत्कृष्टता का प्रतिपादन करने में वेद किसी से पीछे नहीं हैं।*

यजुर्वेद—

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्।

दिव्य गन्ध से युक्त, मर्त्यधर्महीन, उभय लोक के फलदाता, धन-धान्यादि से पुष्टि बढ़ानेवाले, तीन नेत्रवाले शिवदेवका हम

---

* वि० वा० पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र (मुरादाबाद) के हरिहरैकभाव वर्णन से।

पूजन करते हैं। वे शिवजी हमको मृत्यु, अपमृत्यु तथा संसार के मरण से मुक्त करें यानी छुड़ावें। जैसे पक्का फल अपनी ग्रन्थि से टूटकर पृथ्वी पर गिरता है इसी प्रकार हम भी जन्म-मरण के बन्धन से चिरमुक्त हो जायँ और अभ्युदय तथा निःश्रेयसरूप दोनों फलों से भ्रष्ट न हों।

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः। नमस्ते अस्तु धन्वने वाहुभ्यामुततेनमः ॥ १६।१ ॥ या ते रुद्र शिवात-नूरघोरापापकाशिनी। तया नस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभि-चाकशीहि या० ॥ १६।२ ॥

हे दुःख दूर करनेवाले, ज्ञान के देनेवाले अथवा पापीजनों को कर्मफल देकर रुलानेवाले रुद्रदेव! आपको, आपके बाणों को और आपकी दोनों भुजाओं को नमस्कार है, हे रुद्र देव! आपका क्रोध और बाणधारी हस्त शत्रुओं पर पड़े और हमको शान्ति हो ॥१६।१॥ कैलास पर्वत पर स्थित होकर प्राणियोंके सुख का विस्तार करनेवाले अथवा गिरा अर्थात् वाणीमें स्थित होकर सुखका विस्तार करनेवाले, पर्वत पर शयन करनेवाले हे सर्वज्ञ रुद्र! आपका शान्त और मंगलरूप विषमता रहित होने से पाप-फलको न देकर पुण्य-फल का ही देनेवाला है। उस (शान्तमय) सुख भरे शरीर से हमको आलोकित कीजिए ॥१६।२॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥१६।४१॥

इस लोक के कल्याणकारी, जिनसे कि सुख होता है अथवा सुखरूप संसाररूप मुक्तिरूप आप शिवजी को नमस्कार है। संसार के सुखदाता पारलौकिक कल्याण के आकर (खान) आपको नमस्कार है और मोक्षसुख करनेवाले आपको नमस्कार है, कल्याणरूप एवं निष्पाप आपको नमस्कार है और भक्तों के अत्यन्त कल्याणकारक तथा उनको निष्पाप करनेवाले हे शिवजी ! आपको नमस्कार है ॥ १६।४१ ॥

अथर्ववेद—

नमस्तेऽस्त्वायते नमो अस्तु परायते नमस्ते रुद्र तिष्ठत आसीनाय ते नमः ॥ ११।१।२।१५ ॥

हे रुद्र ! हमारे सन्मुख आते हुए आपके निमित्त नमस्कार है, पराङ्मुख होकर जाते हुए आपको नमस्कार है, जहाँ-कहीं स्थित और अपने स्थान पर आसीन आपको नमस्कार है ।११।१।२।१५।

भवशर्वाविदं ब्रूमो रुद्रं पशुपतिश्च यः ॥११।३।६।९॥

भव तथा शर्व नामवाले महादेव के उद्देश्य से हम स्तुति-वाक्य कहते हुए रुद्ररूप पशुपति देव की स्तुति करते हैं ।।११।३।६।९

सहस्राक्षमतिपश्यं पुरस्ताद्द रुद्रमस्यन्तं बहुधा विपश्चितम् ।
मोपरम जिह्वयेयमानेयम् ॥१२।२।१७ ॥

सहस्रों नेत्रवाले सन्मुख से आड़ में दीखनेवाले अनेक प्रकार से (पापों को) गिरानेवाले यानी नाश करनेवाले महा बुद्धिमान्, जयशक्ति के साथ चलते हुए रुद्र (दुःखनाशक शिव) से हम उपराम न हों यानी उनको न भूलें अर्थात् उनका निरन्तर चिन्तवन करें ॥ १२।२।२७ ॥

योऽभियातो निलयते त्वां रुद्र निचिकीर्षति ।
पश्चादनुप्रयुङ्क्षेत्तं विद्धस्य पदवीरिव ॥११।२।१३॥

जो (दुष्कर्मा) गुप्त रीति से भी शिव की आज्ञा का भङ्ग करता है, शिवदेव उसे दण्ड ही देते हैं। जैसे व्याधे घायल शिकार को रुधिरादि चिन्ह से खोज कर पकड़ लेते हैं ॥ ११ । २ । १३ ॥

ऋग्वेद (रुद्रसूक्त)—

उन्मामभंद वृषभो मरुत्वान्त्वक्षीयया वचसानाधमानं ।
घृणीवच्छायामरपा अशीया विवासेयं रुद्रस्यसुम्नं ॥
कस्यते रुद्र मृडयाकुर्हस्तो यो अस्ति भेषजोजलाषः । अप भर्तारपसो दैव्यस्याभी नु मा वृषभ चक्षमीथाः ॥ प्र बभ्रेव

वृषभाय श्वितीचे महो महीं सुष्टुतिमीरयामि। नमस्या-कल्मलीकिनं नमोभिर्गृणीमसि त्वेषं रुद्रस्य नाम ॥ स्थिरे-भिरङ्गैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः। ईशा नादस्य भुवनस्य भूरेर्न वा उ योषद्रुद्रादसूर्यम् ॥ अर्हन् बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपं। अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति ॥ ऋ० वे० अष्ट २--७ अ० २ वर्ग ४।

हे रुद्र! आपका सुखदायक हाथ कहाँ है, जो हाथ सबको सुखी करनेवाला है, उस हाथ से मेरी रक्षा करो। हे काम-नाओं की वर्षा करनेवाले! देवकृत पापों के विनाशक! आप मुझ अपराधी के अपराध शीघ्र क्षमा करें। विश्व के भर्ता, ब--भ्रुवर्ण, कामनाओं के बरसानेवाले, शीघ्रकारी, पूजित, इस गुण-विशिष्ट रुद्र के निमित्त मैं सुन्दर स्तुति का उच्चारण करता हूँ। हे स्तुति करनेवाले! प्रज्वलित और प्रकाशित रुद्र को नमस्कार करो अथवा हवि से उनका पूजन करो। हम महादेव का दीप्त नाम संकीर्त्तन करते हैं। दृढ़ अङ्गों से युक्त आठ मूर्तिरूप आत्मावाले बहुत रूपों से युक्त, तेजस्वी, बभ्रुवर्णवाले, रुद्र, प्रदीप्त, हिरण्मय, रमणीय अलंकारों से दीप्त होनेवाले हे ईश्वर! इस भूत-समूह के स्वामी! आप रुद्र से बल पृथक् नहीं होता। हे

रुद्र ! आप ही पूजा के योग्य होते हुए धनुष और बाण को धारण करते हैं, बहुत प्रकार के पूजनीय रूपों से युक्त निष्क अर्थात् हार को धारण करते तथा पूजित होते हुए इस समस्त विश्व को रक्षित रखते हो। हे रुद्र ! आपसे अधिक बलवान् इस जगत् में कोई नहीं है, इस कारण आप ही इस पूजा के व्यापार से युक्त होने योग्य हैं।

सामवेद—

आवोराजामध्वरस्य रुद्रम् ॥

कौषातकीब्राह्मण—

रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम् ॥२५-१३॥

जैमिनि ब्राह्मण—

ततो देवा रुद्रं नापश्यन्। ते देवा रुद्रं ध्यायन्ति। ते देवा ऊर्ध्वं बाहवः स्तुन्वन्ति। यो वै रुद्रः स भगवानित्यादि।

शतपथब्राह्मण—

शर्व एतान्यष्टौ (रुद्रः, सर्वः, शर्वः, उग्रः, पशुपतिः, उग्रः, अशनिः, भवः, महान्देवः,) अग्निरूपाणि ॥ १६-१-३-१८ ॥

श्रीकुलार्णवतन्त्र—

अस्ति देवि परं ब्रह्मस्वरूपी निष्कलः शिवः।
सर्वज्ञः सर्वकर्त्ता च सर्व्वेशो निर्म्मलोऽद्वयः ॥ ७ ॥

स्वयं ज्योतिरनाद्यन्तो निर्वैरः परात् परः।
निर्गुणः सच्चिदानन्दस्तथा वै जीवसंज्ञकः ॥ ८ ॥

तैत्तिरीयकारण्य—

ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमो नमः।
भवे भवेनाति भवेभवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ १ ॥
वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः ॥ २ ॥
बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥ ३ ॥ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोर-तरेभ्यः। सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥४॥
तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ५ ॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्मा-धिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम् ॥६॥

बुद्धिमान् पुरुष के ज्ञान उत्पन्न करनेवाले महादेव के पंच-मुखों के मध्य में पश्चिम मुख के प्रतिपादक मंत्र का अर्थ कहते हैं— मैं तो सद्योजात नामक पश्चिम मुख की शरण को प्राप्त होता हूँ, उस सद्योजात मुख को प्रणाम है। पृथ्वी में जन्म लेने के लिए आप मुझ को प्रेरणा मत कीजिये। बल्कि जन्म के लंघन-

रूपी तत्त्वज्ञान की प्रेरणा कीजिए। संसार से उद्धार करने-वाले सद्योजात के निमित्त प्रणाम है ॥ १ ॥ अब उत्तर मुख प्रतिपादक मंत्रार्थ कहते हैं—उत्तर मुख वामदेव, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, रुद्ररूप के निमित्त नमस्कार है। काल, कलविकरण और बलविकरण के निमित्त नमस्कार है ॥ २ ॥ बल, बलप्रमथन, सर्वभूत-दमन, मनोन्मन के निमित्त नमस्कार है, जो महादेव कि सब के स्वामी हैं, उन के निमित्त नमस्कार है ॥ ३ ॥ अब दक्षिण वक्त्रके प्रतिपादक मंत्र का अर्थ कहते हैं—अघोर नामक दक्षिण वक्त्ररूप जो देव हैं, उनके विग्रह अघोर हैं। सात्त्विक होने से पहला विग्रह शान्त है, दूसरा विग्रह घोर अर्थात् राजस होने से उग्र है, तीसरा विग्रह तामस होने से घोरतर है, हे शर्व ! हे पर-मेश्वर!! आपके यह तीन प्रकार के विग्रह और सब रुद्ररूपों को सब देश काल में नमस्कार है ॥ ४ ॥ उत्तर मुखवाला तत्पुरुष नामक देव है, उस तत्पुरुष नाम देव को गुरु तथा शास्त्र मुख से जानते हैं और जानकर उन महादेव का ध्यान करते हैं, वह रुद्रदेव हमको ज्ञान-ध्यान के अर्थ में प्रेरणा करैं ॥५॥ ईशान नामक जो ऊर्ध्वमुख देव हैं, वे वेदशास्त्रादि चौंसठ कला और विद्याओं के नियामक हैं तथा सब प्राणियों के ईश्वर हैं। वेद के पालक हिरण्यगर्भ के अधिपति ब्रह्म परमात्मा हमारे ऊपर अनुग्रह करने के निमित्त शान्त और सदा शिवरूप हों ॥ ५ ॥

श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा है।

क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः

क्षरात्मानावीशते देव एकः।

तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्त्वभावाद्

भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः॥ (अ० १)

एको हि रुद्रो न द्वितीयाय

तस्थुर्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।

प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति संचुकोपान्तकाले

संसृज्य विश्वाभुवनानि गोपाः॥ २॥

(अध्याय० ३)

जाबालोपनिषद्॥ १४॥

अथ हैनं ब्रह्मचारिण ऊचुः किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति॥ स होवाच याज्ञवल्क्यः। शतरुद्रियेणेत्येतान्येव ह वा अमृतस्य नामानि॥ एतैर्ह वा अमृतो भवतीति एवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः॥ ३॥

ब्रह्मविन्दूपनिषद्॥ १२॥

निर्विकल्पमनन्तं च हेतुदृष्टान्तवर्जितम्।

अप्रमेयमनाद्यं च ज्ञात्वा च परमं शिवम्॥९॥

कैवल्योपनिषद् ॥ १३ ॥

हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥६॥
तमादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ।
उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥
ध्यात्वामुनिर्गच्छतिभूतयोनिं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ७

हंसोपनिषद् ॥ १५ ॥

तस्मिन्मनो विलीयते मनसि संकल्पविकल्पे दग्धे पुण्य-पापे सदाशिवः शक्त्यात्मा सर्वत्रावस्थितः स्वयं ज्योतिः शुद्धो बुद्धो नित्यो निरञ्जनः शान्तः प्रकाशत इति ॥३॥

गर्भोपनिषद् ॥ १७ ॥

अहो दुःखोदधौ मग्नो न पश्यामि प्रतिक्रियाम् ।
यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्प्रपद्ये महेश्वरम् ॥

अमृतनादोपनिषद् ॥ २२ ॥

ओंकाररथमारुह्य विष्णुं कृत्वाथ सारथिम् ।
ब्रह्मलोकपदान्वेषी रुद्राराधनतत्परः ॥ २ ॥

अथर्वशिर उपनिषद् ॥ २३ ॥

ॐ देवा ह वै स्वर्गं लोकमायँस्ते रुद्रमपृच्छन्को भवा-

निति। सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासं वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति।

हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः। तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तःयोऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत्परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान् महेश्वरः ॥ ३ ॥

अथर्वशिखोपनिषद् ॥ २४ ॥

देवाश्चेति संधत्तां सर्वेभ्यो दुःखभयेभ्यः संतारयतीति तारणात्तारः। सर्वे देवाः संविशन्तीति विष्णुः। सर्वाणि बृंहयतीति ब्रह्मा। सर्वेभ्योऽन्तःस्थानेभ्यो ध्येयेभ्यः प्रदीपवत्प्रकाशयतीति प्रकाशः ॥ १ ॥ प्रकाशेभ्यः सदोमित्यन्तःशरीरे विद्युद्वद्द्योतयतीति मुहुर्मुहुरिति विद्युद्वत्प्रतीयादिशं दिशं भित्वा सर्वाल्लोकान्व्याप्नोतीति व्यापनाद्व्यापी महादेवः ॥ २ ॥

बृहज्जाबालोपनिषद् ॥ ७७ ॥

शिवश्चोर्ध्वमयः शक्तिरूर्ध्वशक्तिमयः शिवः ।

तदित्थं शिवशक्तिभ्यां नाव्याप्तमिह किंचन ॥९॥

(अध्याय २)

मन्त्रिकोपनिषद् ॥ ३४ ॥

कालः प्राणश्च भगवान्मृत्युः शर्वो महेश्वरः ।

उग्रो भवश्च रुद्रश्च ससुरः सासुरस्तथा ॥ १२ ॥

प्रजापतिर्विराट् चैव पुरुषः सलिलमेव च ।

स्तूयते मन्त्रसंस्तुत्यैरथर्वविदितैर्विभुः ॥ १३ ॥

शुकरहस्योपनिषद् ॥ ३७ ॥

अथ महावाक्यानि चत्वारि। यथा ॐ प्रज्ञानं ब्रह्म ॥१॥ ॐ अहं ब्रह्मास्मि ॥२॥ ॐ तत्त्वमसि ॥३॥ ॐ अयमात्मा ब्रह्म ॥ ४ ॥ तत्त्वमसीत्यभेदवाचकमिदं ये जपन्ति ते शिव-सायुज्यमुक्तिभाजो भवन्ति ॥

निरालम्बोपनिषद् ॥ ३८ ॥

ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्दमूर्तये ।

निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे ॥

किं ब्रह्म । स होवाच महदहंकारपृथिव्यप्तेजोवायवा-काशत्वेन बृहद्रूपेणाण्डकोशेन कर्मज्ञानार्थरूपतया भास-

मानमद्वितीयमखिलोपाधिविनिर्मुक्तं तत्सकलशक्त्युपबृं-हितमनाद्यनन्तं शुद्धं शिवं शान्तं निर्गुणमित्यादिवाच्यमनि-र्वाच्यं चैतन्यं ब्रह्म ॥

तेजोबिन्दूपनिषत् ॥ ३९ ॥

ॐ तेजोबिन्दुः परं ध्यानं विश्वात्महृदि संस्थितम् ।
आणवं शांभवं शान्तं स्थूलं सूक्ष्मं परं च यत् ॥१॥

नादबिन्दूपनिषत् ॥ ४० ॥

अतीन्द्रियं गुणातीतं मनो लीनं यदा भवेत् ।
अनूपमं शिवं शान्तं योगयुक्तं सदा विशेत् ॥ १८ ॥

ध्यानबिन्दूपनिषत् ॥ ४१ ॥

रेचकेन तु विद्यात्मा ललाटस्थं त्रिलोचनम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं निष्कलं पापनाशनम् ॥ ३२ ॥
अब्जपत्रमधः पुष्पमूर्ध्वनालमधोमुखम् ।
कदलीपुष्पसंकाशं सर्ववेदमयं शिवम् ॥ ३२ ॥

योगतत्त्वोपनिषत् ॥ ४३ ॥

बिन्दुरूपं महादेवं व्योमाकारं सदाशिवम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं धृतबालेन्दुमौलिनम् ॥९९॥
पञ्चवक्त्रयुतं सौम्यं दशबाहुं त्रिलोचनम् ।
सर्वायुधैर्धृताकारं सर्वाभूषणभूषितम् ॥ १०० ॥

उमार्धदेहवरदं सर्वकारणकारणम् ।
आकाशधारणात्तस्य खेचरत्वं भवेद्ध्रुवम् ॥१०१॥

जाबाल्युपनिषत् ॥ १०८ ॥

अथ हैनं भगवन्तं जाबालिं पैप्पलादिः पप्रच्छ भगवन्मे ब्रूहि परमतत्त्वरहस्यम् । किं तत्त्वं को जीवः कः पशुः क ईशः को मोक्षोपाय इति । स तमुवाच यथा तृणाशिनो विवेकहीनाः परप्रेष्याः कृष्यादिकर्मसु नियुक्ताः सकलदुःखसहाः स्वस्वामिबध्यमाना गवादयः पशवः । यथा तत्स्वामिन इव सर्वज्ञ ईशः पशुपतिः ।

त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषत् ॥ ४६ ॥

ओ३म् त्रिशिखी ब्राह्मण आदित्यलोकं जगाम तं गत्वोवाच । भगवन् किं देहः किं प्राणः किं कारणं किमात्मा सहोवाच सर्वमिदं शिव एव विजानीहि । किंतु नित्यः शुद्धो निरञ्जनो विभुरद्वयः शिव एकः स्वेन भासेदं सर्वं दृष्ट्वा तप्तायःपिण्डवदेकं भिन्नवदवभासते ।

भस्मजाबालोपनिषत् ॥ ६० ॥

कैलासशिखरावासमोंकारस्वरूपिणं महादेवमुमार्धकृतशेखरं सोमसूर्याग्निनयनमनन्तेन्दुरविप्रभं व्याघ्रचर्माम्बरधरं

मृगहस्तं भस्मोद्धूलितविग्रहं तिर्यक्त्रिपुंड्रेखाविराजमान-भालप्रदेशं स्मितसंपूर्णपञ्चविधपञ्चाननं वीरासनारूढम-प्रमेयमनाद्यनन्तं निष्कलं निर्गुणं शान्तं निरञ्जनमनामयम् ।

श्रीजाबालिदर्शनोपनिषत् ॥ ६३ ॥

नष्टे पापे विशुद्धं स्याच्चित्तदर्पणमद्भुतम् ।
पुनर्ब्रह्मादिभोगेभ्यो वैराग्यं जायते हृदि ॥ ४६ ॥
विरक्तस्य तु संसाराज्ज्ञानं कैवल्यसाधनम् ।
तेन पापापहानिः स्याज्ज्ञात्वा देवं सदाशिवम् ॥४७॥

पञ्चब्रह्मोपनिषत् ॥ ६६ ॥

अथ पैप्पलादो भगवान्भो किमादौ किं जातमिति । किं भगव इति । अघोर इति । किं भगव इति । वामदेव इति । किं वा पुनरिमे भगव इति । तत्पुरुष इति । किं वा पुनरिमे भगव इति । सर्वेषां दिव्यानां प्रेरयिता ईशान इति । ईशानो भूतभव्यस्य सर्वेषां देवयोगिनाम् । कति वर्णाः । कति भेदाः । कति शक्तयः । यत्सर्वं तद्गुह्यम् । तस्मै नमो महादेवाय महारुद्राय प्रोवाच तस्मै भगवान्महेशः ॥

पाशुपतब्रह्मोपनिषत् ॥ ८० ॥

वैश्रवणो ब्रह्मपुत्रो बालखिल्यः स्वयंभुवं परिपृच्छति

जगतां का विद्या का देवता जाग्रत्तुरीययोरस्य को देवो यानि तस्य वशानि कालाः कियत्प्रमाणाः कस्याज्ञया रविचन्द्रग्रहादयो भासन्ते कस्य महिमा गगनस्वरूप एतदहं श्रोतुमिच्छामि नान्यो जानाति त्वं ब्रूहि ब्रह्मन् ।

स्वयंभूरुवाच कृत्स्नजगतां मातृका विद्या द्वित्रिवर्णसहिता द्विवर्णमाता त्रिवर्णसहिता । चतुर्मात्रात्मकोङ्कारो मम प्राणात्मिका देवता । अहमेव जगत्त्रयस्यैकः पतिः । मम वशानि सर्वाणि युगान्यपि । अहो रात्रादयो मत्संवर्धिताः कालाः । मम रूपा रवेस्तेजश्चन्द्रनक्षत्रग्रहतेजांसि च । गगनो मम त्रिशक्तिमायास्वरूपः नान्यो मदस्ति ।

रुद्रहृदयोपनिषत् ॥ ८८ ॥

श्रीसर्वदेवात्मको रुद्रः सर्वे देवाः शिवात्मकाः ॥ १ ॥
श्रीरुद्ररुद्ररुद्रेति यस्तं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥ १६ ॥
कीर्तनात्सर्वदेवस्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
धनुस्तारं शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते ।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ॥ ३८ ॥
लक्ष्यं सर्वगतं चैव शरः सर्वगतो मुखः ।
वेद्धा सर्वगतश्चैव शिवलक्ष्यं न संशयः ॥ ३९ ॥

योगकुण्डल्युपनिषत् ।

तदभ्यासप्रदातारं शिवं मत्वा समाश्रयेत् ॥ १३ ॥

शरभोपनिषत् ॥ ५२ ॥

अथ हैनं पैप्पलादो ब्रह्माणमुवाच भो भगवन् ब्रह्म-विष्णुरुद्राणां मध्ये को वा अधिकतरो ध्येयः स्यात्तत्त्वमेव नो ब्रूहीति । तस्मै स होवाच पितामहश्च हे पैप्पलाद शृणु वाक्यमेतत् ।

बहूनि पुण्यानि कृतानि येन तेनैव लभ्यः परमेश्वरोऽसौ ।
यस्याङ्गजोऽहं हरिरिन्द्रमुख्याः मोहान्न जानन्ति सुरेन्द्रमुख्याः १
प्रभुं वरेण्यं पितरं महेशं यो ब्रह्माणं विदधाति तस्मै ।
वेदांश्च सर्वान्प्रहिणोति चाग्र्यं तं वै प्रभुं पितरं देवतानाम् २
ममापि विष्णोर्जनकं देवमीड्यं योऽन्तकाले सर्वलोकान्संजहार ३
स एकः श्रेष्ठश्च सर्वशास्ता स एव वरिष्ठश्च ।
शिव एव सदा ध्येयः सर्वसंसारमोचकः ।
तस्मै महाग्रासाय महेश्वराय नमः ॥ ३१ ॥

शाण्डिल्योपनिषत् ॥ ६१ ॥

अथ कस्मादुच्यते महेश्वर इति । यस्मान् महत ईशः शब्दध्वन्या चात्मशक्त्या च महत ईशते तस्मादुच्यते महेश्वर इति ।

पंचाक्षर मंत्र की महिमा—

त्रिपुरातापिन्युपनिषत् ॥ ८३ ॥

शिवोऽयं परमो देवः शक्तिरेषा तु जीवज्ञा ॐ नमः शिवायेति याजुषमन्त्रोपासको रुद्रत्वं प्राप्नोति । कल्याणं प्राप्नोति य एवं वेद ।

सर्वव्रतेषु संपूज्य देवदेवमुमापतिम् ॥
जपेत्पंचाक्षरीं विद्यां विधिनैव द्विजोत्तम ॥१॥

(लिङ्गाध्याय ५)

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरों ! सब व्रतों में शिव-पूजन करके विधि से पंचाक्षरी विद्या का जप करै । तभी व्रत सफल होता है । ऋषियों ने पूछा कि पंचाक्षरी विद्या कौन है ? उसका क्या प्रभाव है और जपका क्या विधान है । यह हमारी श्रवण करने की इच्छा है, आप वर्णन करें ।

सूतजी बोले—हेमुनीश्वरों ! एक समय पार्वतीजी के प्रति शिवजी ने जैसा कथन किया था, वही हम आपको सुनाते हैं ।

पंचाक्षरस्य माहात्म्यं वर्षकोटिशतैरपि ।
न शक्यं कथितुं देवि तस्मात्संक्षेपतः शृणु ॥१॥

श्रीमहादेवजी कहने लगे—पंचाक्षर मंत्र के पूरे माहात्म्य

को करोड़ों वर्षों में भी कोई कहने को समर्थ नहीं है, परन्तु संक्षेप से हम सुनाते हैं। प्रलयकाल में स्थावर, जंगम, देव, असुर, नाग इत्यादि नष्ट हो जाते हैं। प्रकृति के रूप में तुम भी लीन हो जाती हो। तब हम एकाएकी रहते हैं, कोई दूसरा अवशिष्ट नहीं रहता। उस समय वेद और शास्त्र हमारी शक्ति द्वारा पालन किये हुए पंचाक्षर मंत्र में निवास करते हैं। फिर जब हम दो रूप धारण करते हैं तब हमारी प्रकृति ही मायामय शरीर धारणकर नारायणरूप से समुद्र में शयन करती है। उसके नाभिकमल से पंचमुख ब्रह्मा उत्पन्न हो सृष्टि करने की सामर्थ्य के लिए प्रार्थना करते हैं। एक वार ब्रह्माजी की प्रार्थना सुन उनके हित के लिए मैंने पाँच मुखों से पाँच अक्षरों का उच्चारण किया। उन वर्णों को ब्रह्माजी ने पाँच मुखों से ग्रहण किया और वाच्य-वाचक भाव करके परमेश्वर को जाना। पाँच अक्षरों करके त्रैलोक्य पूजित शिव वाच्य है। यह पंचाक्षर मंत्र शिवका वाचक है। उस मन्त्र को तथा उसकी विधि को जानकर बहुत काल जप कर सिद्धि पाकर के जगत् के हित के अर्थ अपने पुत्रों को भी ब्रह्माजी ने उस पंचाक्षर मन्त्र का उपदेश किया। ब्रह्माजी ने उस मन्त्र को पाकर भगवान् शिवजी को प्रसन्न करने के लिए मेरु पर्वत के मुंजवान् शिखर पर दिव्य हजार वर्ष तक तप किया। उनकी दृढ़ भक्ति देख भगवान् ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर लोकहित के लिए

पंचाक्षर मंत्र के ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, वीज, षडंगन्यास, दिग्बन्ध और विनियोग का उपदेश किया।

वे ऋषिगण भी इस तरह मन्त्र का माहात्म्य सुनकर अनुष्ठान करने लगे क्योंकि उसी के प्रभाव से देवता, मनुष्य, असुर, चार वर्णों के धर्मादि, वेद, ऋषि तथा शाश्वत धर्म और यह जगत् स्थित है।

पंचाक्षर मन्त्र अल्पाक्षर है। बहुत अर्थ करके युक्त है। वेद का सार, मुक्ति का देनेवाला, असंदिग्ध, अनेक सिद्धि देनेवाला, सुख से उच्चारण करने योग्य, सब कामना देनेवाला, सब विद्याओं का बीज मंत्र, सब मन्त्रों में आदि मन्त्र, वट-बीज की भाँति बहुत विस्तार युक्त और परमेश्वर का वाक्य पंचाक्षर ही है। उसके आदि में प्रणव लगा देने से वह षडक्षर हो जाता है।

पंचाक्षर मन्त्र तथा षडक्षर मन्त्र में वाच्य वाचक भाव करके शिव स्थित है। शिववाच्य है। और मन्त्र वाचक है यह वाच्य वाचक भाव अनादि सिद्ध है। जिस पुरुष के हृदय में पंचाक्षर मंत्र विद्यमान है। उसने मानो सब शास्त्र और वेद पढ़ लिया क्योंकि शिव ही ज्ञान है, इतना ही परम पद है, इतनी ही ब्रह्म विद्या है। इस लिए नित्य पंचाक्षर को जपै। पंचाक्षर भगवान् शिवजी का हृदय, गुह्य से भी गुह्य और मोक्ष ज्ञान का सब से उत्तम साधन है।

न्यास तीन प्रकार का है—उत्पत्ति, स्थिति और संहार, १ उत्पत्ति न्यास ब्रह्मचारियों को करना चाहिए। २ स्थिति न्यास गृहस्थ के करने योग्य है। ३ संहार न्यास के एकमात्र संन्यासी अधिकारी हैं।

इस प्रकार गुरु से प्राप्त पंचाक्षर मन्त्र का जप करे। क्योंकि सब यज्ञों में जपयज्ञ उत्तम है और सब यज्ञों में हिंसा होती है, किन्तु जप यज्ञ हिंसा रहित है। इसी से और सब यज्ञ, दान, तप आदि जपयज्ञ के षोडशांश की भी तुलना नहीं कर सकते। जप करने से देवता प्रसन्न होते हैं और भोग तथा मोक्ष देते हैं। यक्ष, राक्षस, पिशाच ग्रहादि भी भयभीत होकर जप करनेवाले से दूर रहते हैं। जप से पुरुष मृत्यु को भी जीत लेता है। यदि इसका निरन्तर जप करै तो अवश्य कल्याण होवै।

न्यास करते समय पहले करन्यास, बाद में देहन्यास, पीछे अंगन्यास करै।

पुरश्चरण के समय मन्त्र के वर्णों से चौगुना लक्ष जप करै। रात्रि के समय भोजन करै। सब प्रकार के नियम से रहै। आसन बाँध पूर्व मुख या उत्तर मुख बैठ कर एकाग्र चित्त हो मौन भाव से जप करै और आदि अन्त में पंचाक्षर जप पूर्वक प्राणायाम करै। अन्तमें १०८ वीज (ॐ) मन्त्र का जप करै।

(ॐ) हृदयाय नमः (न) शिरसे स्वाहा (मः) शिखायै वषट् (शि) कवचाय हुँ (वा) नेत्राय वौषट् (य) अस्त्राय फट् ।

जपके प्रभाव को जानकर सदाचार में तत्पर हो निरंतर जप करै तो अवश्य कल्याण हो । आचारहीन पुरुष का सब साधन निष्फल होता है ।परम धर्म और परम तप आचार ही है । आचारयुक्त पुरुष को कहीं भी भय नहीं रहता । सदाचार के पालन करने से पुरुष ऋषि और देवता तक बनजाते हैं । मुख्यतः असत्य का त्याग करै क्योंकि सत्य ब्रह्म है और असत्य ब्रह्म का दूषण है ।

असत्य तथा कठोर वाक्य, पैशुन्य (चुगली), परस्त्री, पराया धन तथा हिंसा इनको मन वचन कर्म से त्याग देवे ।

दीर्घायु चाहनेवाला पवित्र होकर गंगादि नदियों पर लक्ष पंचाक्षर मंत्र का जप करै । दूर्वा के अंकुर, तिल और गुडूची (गिलोय) का दश हज़ार हवन करे ।

अपमृत्यु निवारण के लिए शनिवार को अश्वत्थ वृक्ष का स्पर्श करै और जप करे ।

व्याधि दूर करने के लिए एकाग्र चित्त हो एक लक्ष जप करै और नित्य आककी समिधा से अष्टोत्तर शत हवन करै ।

उदर रोग के शान्त्यर्थ ५ लक्ष मंत्र जप करके दश हजार हवन करै । नित्य सूर्य के सम्मुख पवित्र जल को अष्टोत्तर शत बार अभिमंत्रण करके पान करै ।

इति ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

काशी-मोक्ष-विचार

श्रीशंकर-पद-पद्म को, वन्दि सदा सुख-कन्द ।
"काशी-मोक्ष-विचार" यह, रचौं त्याग जगद्वन्द ॥

शिवगीता—

गर्भजन्मजरामृत्युसंसार-भवसागरात् ।
तारयामि यतो भक्तं तस्मात्तारोऽहमीरितः ॥

अर्थ—शिवजी कहते हैं कि गर्भवास, जन्म, जरा और मृत्युरूपी संसार-सागर से मैं भक्तों को तार देता हूँ । इसीलिये मेरा नाम * 'तारक' कहा गया है ॥

---

* अकारः प्रथमाक्षरो भवति, उकारो द्वितीयाक्षरो भवति, मकारस्तृतीयाक्षरो भवति, अर्द्धमात्रश्चतुर्थाक्षरो भवति, बिन्दुः पंचाक्षरो भवति, नादः षष्ठाक्षरो भवति, तदेव 'तारकं' ब्रह्म त्वं विद्धि ।

भस्मजाबालोपनिषद्-

त्रिशूलगां काशीमधिश्रित्य त्यक्तासवोऽपि मय्येव सं-विशन्ति । एष एवादेशः एष एव उपदेशः । एष एव परमो धर्मः ।

अर्थ—भगवान् शंकर के त्रिशूल पर स्थित काशीपुरी में रह-कर प्राण त्यागने पर जीव मुझको ही पाता है । मेरा यही आदेश, यही उपदेश और यही परम धर्म है ।

जाबालोपनिषद्-

अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु † रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे येनासावमृतीभूत्वा मोक्षीभवति तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत अविमुक्तं न विमुंचेत् ।

अर्थ—काशी में प्राण त्यागने के समय दुःखों को नाश करने-वाले रुद्र भगवान् 'तारक-मंत्र' देते हैं। जिस मन्त्र के प्रभाव से जीव जन्म-मरण से रहित हो जाता है। अतः काशी-सेवन अव-श्य करे। इस अविमुक्तपुरी का निवास कभी भी न छोड़े ।

---

† रुद्रः—रु दुःखं द्रावयतीति रुद्रः, रुद्रमित्यप्युच्यते । तस्माच्छिवः परमकारणम् ।

प्राणाग्निहोत्रोपनिषद्—

वाराणस्यां मृतो वापि इदं वा ब्रह्म यः पठेत् ।
एकेन जन्मना जन्तुर्मोक्षं च प्राप्नुयादिति ॥

अर्थ—जो प्राणी श्रीकाशीजी में देह-त्याग करता अथवा अन्त में तारकब्रह्म के मंत्र को पढ़ता है। उसे एक ही जन्म में मुक्ति मिल जाती है ।

मुक्तिकोपनिषद्—

यत्र कुत्रापि वा काश्यां मरणे स महेश्वरः ।
जन्तोर्दक्षिणकर्णे तु मत्तारं समुपादिशत् ॥
काश्यां तु ब्रह्मनालेस्मिन्मृतो मत्तारमाप्नुयात् ।
पुनरावृत्तिरहितां मुक्तिं प्राप्नोति मानवः ॥

अर्थ—श्रीकाशीजी, विशेष करके ब्रह्मनाल के बीच में जो मरता है, वह मनुष्य जन्ममरण से रहित होकर मुक्त हो जाता है ।

महाभारत अनुशासनपर्व—

कीटपक्षिपतङ्गानां तिरश्चामपि केशव ।
महादेवप्रपन्नानां न भयं विद्यते क्वचित् ॥

अर्थ—कीट, पक्षी, पतंग आदि तिर्यग्योनि के प्राणी भी यदि महादेवजी की शरण लेते हैं तो उनको जन्म-मरणका भय नहीं रह जाता ।

आत्मपुराण–

क्रमिकीटपतङ्गो वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः ।
मृतश्चतुर्विधो जन्तुस्त्रिनेत्रत्वमुपैति हि ॥

अर्थ—काशी में मरने से कृमि-कीट-पतङ्ग तथा विद्वान् ब्राह्मण, ये चारों प्रकारके प्राणी त्रिनेत्रत्व (शिवत्व) को प्राप्त होते हैं।

श्रीमद्भागवत द्वादशस्कन्ध–

क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशी ह्यनुत्तमा ।

अर्थ—सूतजी ऋषियों से कहते हैं कि अनेक क्षेत्र हैं, पर उनमें काशी ही एक उत्तम क्षेत्र है।

दर्शनाद्देवदेस्य ब्रह्महत्या प्रणश्यति ।
प्राणानुत्सृज्य तत्रैव मोक्षं प्राप्नोति मानवः ॥

अर्थ—देवों के देव महादेवजी के दर्शन से ब्रह्महत्या का भी पाप छूट जाता और काशीक्षेत्र में प्राणत्याग करने से मनुष्य मोक्षपद पाता है।

श्रीमत्स्वामी शंकराचार्यजी–

काशी धन्यतमा विमुक्तनगरी सालंकृता गंगया ।
अत्रेयं मणिकर्णिका सुखकरी मुक्तिर्हि तत्किंकरी ॥

अर्थ—काशीजी धन्यतमा अर्थात् अत्यन्त पुण्यरूप उत्तम

नगरी है, जहाँ गंगाजी शोभायमान हैं। उसमें भी मणिकर्णिका उत्तम सुख देनेवाली है क्योंकि मुक्ति उसकी दासी है।

लिंगपुराण-

काश्यां यो वै मृतश्चैव तस्य जन्म पुनर्न हि।

अर्थ—काशी में मरनेवाले प्राणी फिर संसार में जन्म नहीं लेते; क्योंकि वे सायुज्य मुक्ति पाजाते हैं।

शिवरहस्य-

जले स्थलेऽन्तरिक्षे वा यत्र कुत्रापि वा मृताः।
तारकं ज्ञानमासाद्य कैवल्यपदभागिनः॥

अर्थः—श्रीकाशीजी में पृथ्वी, जल, आकाश आदि किसी जगह भी यदि मृत्यु हो तो वह प्राणी भगवान् शिवजी के तारक-मन्त्रोपदेश-द्वारा मोक्षपद का भागी होता है।

स्कन्दपुराण-

असीवरुणयोर्मध्ये पञ्चक्रोशं महत्तरम्।
अमरा मृत्युमिच्छन्ति का कथा त्वितरे जनाः॥

अर्थः—असी और वरुणा के बीच में पञ्चकोश (काशीक्षेत्र) अतिशय श्रेष्ठ है, क्योंकि उसमें देवता लोग भी जन्म लेकर मृत्यु चाहते हैं। तब इतर मनुष्यों की कथा ही क्या है।

काशीखण्ड—

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्तिकराणि च ।
काशीं प्राप्य विमुच्यन्ते नान्यथा तीर्थकोटिभिः ॥

कीटाः पतङ्गा मशकाश्च वृक्षा जले
स्थले ये विचरन्ति जीवाः ।
मण्डूकमत्स्याः कृमयोऽपि काश्यां
त्यक्त्वा शरीरं शिवमाप्नुवन्ति ॥

अर्थ—अन्यान्य मुक्तिक्षेत्र केवल काशी को प्राप्त कराते हैं; परन्तु काशी को पाकर प्राणी मुक्त हो जाते हैं। अर्थात् अन्य करोड़ों तीर्थों से बड़ी यह काशीपुरी है। कीट, पतंग, मच्छड़, वृक्ष, जलचर और थलचर आदि सभी प्राणी यहाँ अपने शरीर को छोड़कर कल्याणपद को प्राप्त होते हैं ॥

येनैकजन्मना मुक्तिर्यस्मात् करतले स्थिता ।
अनेकजन्मसंसारबन्धनिर्मोक्षकारिणी ॥

अर्थ—श्रीकाशीजी में एक ही जन्म में मुक्ति मुट्ठी में आ जाती है। क्योंकि यह अनेक बार जन्म देनेवाले संसार-बन्धन की नाशकारिणी है।

वायवीयसंहिता—

मुक्तेश्च प्रापकं ह्येतच्चतुष्टयमुदाहृतम् ।
शिवार्चनं रुद्रजप उपोष्यं च दिनत्रयम् ।
वाराणस्यां च मरणं मुक्तिरेषा चतुर्विधा ॥

अर्थ—मुक्तिको देनेवाले चार साधन हैं। जैसे-(१) शिवपूजन (२) रुद्रजाप (३) उपवास और (४) काशीजी में शरीरत्याग ।

कुत्रचिच्च शुभं वर्धेत् कुत्रचित्पापसंक्षयः ।
सर्वेषां कर्मणां नाशो नास्ति काशीपुरीं विना ॥

अर्थ—कोई क्षेत्र पुण्य को बढ़ाता, कोई पापों का नाश करता, परन्तु काशीवास समग्र कर्मों का नाश करनेवाला है। अर्थात् मुक्ति देनेवाली केवल श्रीकाशीपुरी ही है।

शिवपुराण—

सर्वे वर्णा आश्रमाश्च बालयौवनवार्द्धकाः ।
अस्यां पुर्यां मृताश्चेत्स्युर्मुक्ता एव न संशयः ॥

अर्थ—सब और वर्ण आश्रमवाले बालक, वृद्ध तथा युवावस्था-वाले प्राणी काशीजी में शरीरत्याग करने से मुक्त होते हैं। इसमें कोई संशय नहीं है।

मत्स्यपुराण-

एक एव प्रभावोऽस्ति क्षेत्रस्य परमेश्वरि ।
एकेन जन्मना देवि मोक्षं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥

अर्थ—इस (काशीजी) की सबसे बड़ी महिमा यह है कि यहाँ एक ही जन्म में जीव उत्तम मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है ।

नारदपुराण-

योजनानां शतस्थोऽपि यो विमुक्तं स्मरेद्यदि ।
बहुपातकपूर्णोऽपि स पापैर्न प्रबाध्यते ॥

अर्थ—यदि एक सौ योजन पर स्थित रहकर भी श्रीकाशीजी का स्मरण करे तो बहुत पापकर्म से पूर्ण होने पर भी वह प्राणी पापों से रहित हो जाता है ।

कूर्मपुराण-

यत्र साक्षान्महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः ।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तदेवातिविमुक्तिदम् ॥

अर्थ—श्रीकाशीजी में साक्षात् शंकरजी जीव को मरणसमय में तारकब्रह्म का उपदेश देते हैं । यह वही मोक्षदायिनी काशी-पुरी है ।

ब्रह्मवैवर्तपुराण—

अविमुक्तं समासाद्य न त्यजेन्मोक्षकामुकः ।
क्षेत्रन्यासं दृढं कृत्वा वसेद्धर्मपरः सदा ॥

अर्थ—अविमुक्त काशीक्षेत्र को पाकर मुक्ति की इच्छा रखनेवाला पुरुष क्षेत्रसंन्यास को दृढ़ करके धर्मपरायण होकर काशीवास करे ।

पद्मपुराण—

तीर्थांतराणि क्षेत्राणि विष्णुभक्तिश्च नारद ।
अन्तःकरणसंशुद्धिं जनयन्ति न संशयः ॥
वाराणस्यपि देवर्षे तादृश्येव परन्तु सा ।
प्रकाशयति ब्रह्मैक्यं तारकस्योपदेशतः ॥

अर्थ—अन्यान्य तीर्थ तथा विष्णुभक्ति आदि केवल अन्तःकरण की शुद्धि करती हैं । इसमें सन्देह नहीं; परन्तु हे नारदजी ! काशी तारकब्रह्म के उपदेश से 'मुक्तिपद' को प्रदान करती है ॥

काशीखण्ड—

उत्तरं दक्षिणं वापि अयनं न विचारयेत् ।
सर्वोऽप्यस्य शुभः कालो ह्यविमुक्ते प्रिये यतः ॥

अर्थ—हे प्रिये ! काशी में मरण के लिए कोई समय या

पर्वविशेष की गिनती नहीं है। क्योंकि इस अविमुक्तक्षेत्र में जो मरता है, उसके लिये सब समय और दिन एक सा है।

सनत्कुमारसंहिता–

रथ्यान्तरे मूत्रपुरीषमध्ये चांडालवेश्मन्यथ वा श्मशाने।
कृतप्रयत्नोऽप्यकृतप्रयत्नो देहावसाने लभतेऽत्र मोक्षम् ॥

अर्थ—इस पुरी की गलियों में, मूत्र, विष्ठा से दूषित स्थानों में, चांडाल के गृह में या श्मशानभूमि में कहीं भी विधि से या अविधि से मरने पर जीव मोक्षपद को प्राप्त करता है।

काशीखण्ड–

संसारभयभीता ये ये बद्धाः कर्मबन्धनैः।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः॥
श्रुतिस्मृतिविहीना ये शौचाचारविवर्जिताः।
येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः॥

अर्थ—जो लोग सांसारिक भय से डरे हुए हैं, अथवा जो कर्मपाश से बँधे हुए हैं और जिन्हें कहीं गति नहीं मिलती, उनके लिये काशी गति देनेवाली है। जो वेद–शास्त्र नहीं जानते अथवा शौचादि नित्यक्रियाओं से रहित हैं और जिनकी कहीं गति नहीं है, उनके लिये भी यह काशी नगरी मोक्षदायिनी है।

पद्मपुराण—

काश्यां मृतस्तु सालोक्यं साक्षात्प्राप्नोति सत्तमः ।
ततः सरूपतां याति ततः सान्निध्यमश्नुते ॥
ततो ब्रह्मैकतां याति न परावर्तते पुनः ॥

अर्थ—काशी में मरे हुए सज्जन साक्षात् सालोक्य को प्राप्त करके सारूप्यमुक्ति पाते हैं। फिर वे सान्निध्य मुक्ति का भी सुख भोगते हैं। तत्पश्चात् ब्रह्मैकता को प्राप्त करके पुनः संसार में नहीं आते।

ब्रह्मपुराण—

चतुर्धा वितते क्षेत्रे सर्वत्र भगवाञ्छिवः ।
व्याचष्टे तारकं वाक्यं ब्रह्मात्मैकप्रबोधकम् ॥

अर्थ—इस क्षेत्र में चारों ओर फैले हुए भगवान् शिवजी ब्रह्मैकत्व को बतानेवाले 'तारक' मन्त्र का उपदेश करते हैं।

रामायण—

मुक्ति जन्म महि जानि, ज्ञान-खानि अघ-हानि कर ।
जहँ बस शम्भु भवानि, सो काशी सेइय कस न ॥

अर्थ—मुक्ति का जन्मस्थान, ज्ञान की खानि और पापों को नाश करनेवाली इस काशीपुरी में अन्नपूर्णासहित श्रीविश्वनाथजी

निवास करते हैं। ऐसी पुरी में क्यों न निवास किया जाय, अर्थात् अवश्य काशीवास करना चाहिये।

गर्गसंहिता—

विश्वेश्वरस्य देवस्य काशीनाम्ना महापुरी।
यत्र पापी मृतः सद्यः परं मोक्षं प्रयाति हि॥

अर्थ—यह काशी भगवान् श्रीविश्वनाथजी की महापुरी है। यहाँ पर प्राण छोड़नेवाला प्राणी उत्तम मोक्ष को प्राप्त होता है।

लघु आश्वलायनस्मृति—

यः कश्चिन्मानवो लोके वाराणस्यां त्यजेद्वपुः।
स चाप्येको भवेन्मुक्तो नान्यथा मुनयो विदुः॥

महर्षियों ने कहा है कि जो लोग मनुष्यलोक में जन्म लेकर काशी में शरीर त्याग करते हैं, वे मुक्त हो जाते हैं।

पद्मपुराण पातालखण्ड—

यूकाश्च दंशा अपि मत्कुणाश्च मृगादयः कीटपिपीलिकाश्च।
सरीसृपा वृश्चिकसूकराश्च काशीमृताः शंकरमाप्नुवंति॥

अर्थ—यूका (जूं) डाँस, खटमल, मृगादि जीव, कीट, चीटी तथा सर्पादि, बिच्छू और शूकर भी काशी में मर कर शिव को प्राप्त होते हैं।

विनयपत्रिका ।

को जांचिये सम्भु तजि आन ।

दीनदयालु भक्त-आरति-हर,

सब प्रकार समरथ भगवान ॥

कालकूट-ज्वर-जरत सुरासुर,

निज पन लागि कीन्ह विष पान ।

दारुन दनुज जगत-दुखदायक,

मारेउ त्रिपुर एकही वान ॥

"जो गति अगम महामुनि दुर्लभ,

कहत संत स्रुति सकल पुरान ।

सो गति मरन काल अपने पुर,

देत सदा सिव सबहिं समान ॥"

सेवत सुलभ उदार कल्पतरु,

पारवती-पति परम सुजान ।

देहु काम-रिपु राम-चरन-रति,

तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥

भावार्थ—आप भगवान् शिवजी को छोड़कर और किससे याचना की जाय ? क्योंकि आप दीनों पर दया करनेवाले, भक्तों के कष्ट हरने वाले और सब प्रकार समर्थ ईश्वर हैं ॥१॥ समुद्रमन्थन के समय जब कालकूट विष की ज्वाला से सब देवता और राक्षस जलने लगे थे, तब आप अपने दीनों पर दया करने के पण की रक्षा के लिये तुरन्त उस विष को पी गये थे। जब दारुण दानव त्रिपुरासुर जगत् को बहुत दुःख देने लगा, तब आपने उसको एकही बाण से मार डाला ॥ २ ॥ 'जिस परम गति को सन्त-महात्मा, वेद और पुराण महान् मुनियों के लिये भी दुर्लभ बताते हैं, हे सदाशिव ! वही परम गति काशी में मरने पर आप सभी को समान भाव से दे देते हैं ॥ ३ ॥ हे पार्वतीपते ! हे परम सुजान ! सेवा करने पर आप सहज में ही प्रसन्न हो जाते हैं, आप कल्प वृक्ष के समान मुँह माँगा फल देनेवाले उदार और कामदेव के शत्रु हैं। अतएव, हे कृपानिधान ! तुलसीदास को श्रीरामजी के चरणों की प्रीति दीजिये ॥ ४ ॥

शिव पूजन माहात्म्य ।

पाराशरपुराणे—

ब्राह्मणः सर्वसिद्ध्यर्थं कुर्याच्छङ्करपूजनम् ।

ब्राह्मण (ब्रह्म के तत्त्वको जाननेवाले) को चाहिए कि सब

अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष सिद्धि के लिए शिवजी का पूजन करे ॥ १ ॥

अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि च ।
महेशार्चनपुण्यस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ २ ॥

हजारों अश्वमेध यज्ञ करो, चाहे सैकड़ों वाजपेय यज्ञ करो; पर ये सब शिवपूजा की सोलहवीं कला के समान भी नहीं होते ॥२॥

भविष्यपुराण-

स्फुटं निर्वहते यस्य यावज्जीवं शिवार्चनम् ।
मनुष्यचर्मणा नद्धः स रुद्रो नात्र संशयः ॥ ३ ॥

जब तक मनुष्य शरीर में जीव है तब तक जिसका शिवपूजन कर्म बराबर बना रहता है। उस पुरुष का कभी भी नाश नहीं होता अर्थात् वह पुरुष कभी भी परमार्थ से भ्रष्ट नहीं होता। वह साक्षात् शिवरूप है इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ ३ ॥

वरं प्राणपरित्यागः शिरसो वापि कर्तनं ।
न त्वसंपूज्य भुंजीत भगवंतं त्रिलोचनम् ॥ ४ ॥

प्राणों का निकल जाना और सिर का कट जाना भी अच्छा है, परन्तु शिवपूजन किये विना भोजन करना अच्छा नहीं है ॥ ४ ॥

भविष्यपुराण-

आकाशं लिंगमित्याहुः पृथ्वी तस्य पीठिका ।
आलयः सर्वभूतानां लयनाल्लिंगमुच्यते ॥६॥

आकाश को लिंग कहते हैं, पृथ्वी उसकी पीठिका अर्थात् आधारभूता पीढ़ी मानी गई है और सर्व जीवमात्र का यह निवास का स्थान है और प्रलयकाल में इसमें सब लय हो जाते हैं। इसी लिए वह लिंग कहा जाता है।

भस्ममहिमा ।

लिंगपुराण-

विना भस्म त्रिपुंड्रेण विना रुद्राक्षमालया ।
पूजितोपि महादेवो न तस्य फलदो भवेत् ॥१॥

विना भस्म और त्रिपुंड्र लगाये और रुद्राक्षमाला धारण किये एवं विना पूजन किये महादेवजी फल के दाता नहीं होते ॥१॥

सनत्कुमारसंहिता-

यथा कृशानुरहितो ह्यध्वरो नैव शोभते ।
अशेषसाधनोपेतं भस्महीनं शिवार्चनम् ॥ २ ॥

जैसे सब सामग्री के होते हुये भी अग्नि के विना यज्ञ शोभा नहीं देता, तैसे ही सब साधनों के होते हुए भी भस्म विना शिव-पूजन शोभित नहीं होता।

बृहज्जाबालोपनिषद्–

ये भस्मधारणं त्यक्त्वा कर्म कुर्वन्ति मानवाः।
तेषां नास्ति विनिर्मोक्षः.........

जो मनुष्य भस्म धारण किये विना कर्म करता है, वह मोक्ष का अधिकारी नहीं होता।

महाभारत–

आयुःकामोथवा राजन् भूतिकामोऽथवा नरः।
नित्यं वै धारयेद्भस्म मोक्षकामी च वा नरः॥

आयु चाहनेवाला, महान् ऐश्वर्य चाहनेवाला या मोक्ष की इच्छा करनेवाला मनुष्य हो तो उसे चाहिए कि सदा भस्म धारण करे।

तैत्तिरीयक श्रुति–

भूत्यै न प्रमादितव्यमिति रावणभाष्ये भूतिशब्दार्थो भस्मेति स्पष्टमुक्तम्।

भूति (भस्म) धारण करना कभी भी न भूले। रावणभाष्य में भूति शब्द का अर्थ भस्म साफ २ कहा है।

भस्म धारण के विषय की व्यवस्था–

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां ह्यग्निहोत्रसमुद्भवम् ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को अग्निहोत्र का भस्म धारण करना चाहिए ।

भृशात्यंतं सावधानो धारयेद्भस्म बुद्धिमान् ।
आदरेण समादाय भस्मपात्रे निधाय तत् ॥

बुद्धिमान् पुरुष बहुत सावधानतापूर्वक और बड़े आदर से भस्म को लेकर पात्र में रक्खे, तब उसको धारण करे ।

प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च त्रिराचम्य समाहितः ।
गृहीत्वा भस्मनो मुष्टिं सद्योजातादिभिर्गृही ॥

शान्त चित्त होकर, हाथ पैर धोके, तीन वार आच–मन करके *'सद्योजात' आदि मन्त्रों से भस्म को मुट्ठी में ग्रहण करे ।

प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यात्वा चैव सदा शिवम् ।
† अग्निरित्यादिभिर्मंत्रैस्त्रिवारमभिमंत्रयेत् ॥

---

* ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमोनमः भवे भवेनाति-भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ १ ॥

† ॐ अग्निरिति भस्म ॐ वायुरिति भस्म ॐ जलमिति भस्म ॐ स्थलमिति भस्म ॐ व्योमेति भस्म सर्वंह वा इदं भस्म ।

तीन प्राणायाम कर शिवजी का ध्यान करके 'अग्नि' इत्यादिक मन्त्र से तीन वार उसे अभिमंत्रित करे।

* ईशानेन पञ्चधा भस्म विकिरेन्मूर्ध्नि यत्नतः।

ईशानमन्त्र से भस्म का पाँच भाग करके यत्न के साथ मस्तक में † 'तत्पुरुषाय' इस मंत्र से, मुख पर § अघोर मंत्र से आठ भाग करके हृदय में लगावे।

वामेन गुह्यदेशे तु त्रिदशस्थानभेदतः।
अष्टधा सद्योमंत्रैः पादावेवं प्रयत्नतः॥

वाम हाथ से कमर के नीचे के स्थानों में देवस्थान के भेद से और ‡ 'सद्योजातं' इस मंत्र से आठ भाग करके यत्न से पैरों में लगावे।

---

* ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिः ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्म शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्।

† ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्

§ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥ २॥

‡ ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमोनमः। भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः॥ १॥

रुद्राक्ष की महिमा

अथ भुशुंडः कालाग्निरुद्रं पप्रच्छ कथं रुद्राक्षोत्पत्तिस्त-द्धारणे किं फलमिति ।

अब रुद्राक्ष की महिमा कहते हैं—बृहज्जाबालोपनिषद् में लिखा है कि भुशुंड ने कालाग्निरुद्र से पूछा कि रुद्राक्ष कैसे उत्पन्न हुआ और इसके धारण करने से क्या फल होता है ?

स होवाच भगवान् कालाग्निरुद्रस्त्रिपुरवधार्थायाहं-ममोलितात्तोऽभवं नेत्रेभ्यो जलविंदवो भूमौ पतितास्ते रुद्राक्षा जाताः ।

भगवान् कालाग्नि रुद्र बोले कि त्रिपुरासुर के मारने को जब मैंने नेत्र खोले, तब मेरे नेत्रों से जल की बूँदें पृथ्वी में गिरीं, उन्हीं से रुद्राक्ष उत्पन्न हुआ ।

तेषां नामोच्चारणमात्रेण दशगोदानजं फलं दर्शन-स्पर्शनाभ्यां द्विगुणं फलमत ऊर्ध्वं वक्तुं न शक्नोमि ।

उन (रुद्राक्षों) का नाम लेने से ही दस गऊ के दान करने का फल होता है और दर्शन-स्पर्शन करने से बीस गौदान करने का फल होता है । इसको (शरीर पर) धारण करने के फल को कहने के लिए मेरी सामर्थ्य नहीं ।

फलस्य दर्शने पुण्यं स्पर्शात्कोटिगुणं भवेत् ।
शतकोटिगुणं पुण्यं धारणाल्लभते नरः ॥

(देवीभागवते)

रुद्राक्ष के दर्शन करने में जो पुण्य है, उससे कोटिगुना पुण्य स्पर्श करने से होता और अरबगुना फल रुद्राक्ष के धारण करने से मनुष्य को प्राप्त होता है ।

लक्षकोटिसहस्राणि लक्षकोटिशतानि च ।
जपाच्च लभते नित्यं नात्र कार्या विचारणा ॥

(शिवरहस्ये)

लक्ष कोटि से भी सहस्रगुना और लक्षकोटि का शतगुना फल रुद्राक्ष की माला से नित्य जप करनेवाला मनुष्य पाता है, इसमें कुछ विचार (सन्देह) नहीं है ।

विभूतिधारणं कृत्वा कृत्वा रुद्राक्षधारणम् ।
यः शिवं पूजयेद्भक्त्या स मोक्षमधिगच्छति ॥

भस्म और रुद्राक्ष धारण करके जो पुरुष भक्ति से शिवजी का पूजन करता है, वह मोक्ष को प्राप्त होता है ।

रुद्राक्षालंकृता ये च ते वै भागवतोत्तमाः ।
रुद्राक्षधारणं कार्यं सर्वैः श्रेयोर्थिभिर्नृभिः ॥

(देवीभागवते)

जो पुरुष रुद्राक्षों से भूषित हैं, वे ही भागवत भक्तों में उत्तम हैं। इस लिए कल्याण चाहनेवाले मनुष्यों को रुद्राक्ष धारण करना चाहिए।

रुद्राक्ष धारण की विधि

पंचामृतं पंचगव्यं स्नानकाले प्रयोजयेत्।
रुद्राक्षस्य प्रतिष्ठायां मंत्रः पंचाक्षरस्तथा ॥ १ ॥

जब माला गूँथकर तैयार होजाय तो पंचामृत और पंचगव्य मिलाकर माला को स्नान करावे और प्रतिष्ठा के समय 'नमः शिवाय' इस पञ्चाक्षर मन्त्र को पढ़े।

प्रक्षाल्य गंधतोयेन पंचगव्येन चोपरि।
ततः शिवाम्भसा क्षाल्य मूलमंत्रैः ततो न्यसेत् ॥ १ ॥

तदनन्तर माला को शुद्ध सुगन्धित जल से धोवे, पंचगव्य से स्नान करावे। फिर गङ्गाजल से शुद्ध स्नान कराकर उसमें मूल मन्त्र का न्यास करे।

पश्चाद्धि पूजयेत्तां हि गंधपुष्पाक्षतादिभिः।
मूलमंत्रं समुच्चार्य शुद्धभूमौ निधाय च ॥ २ ॥

फिर उसे शुद्ध भूमि में रखकर मूल मंत्र का उच्चारण करता हुआ चन्दन, फूल, चावल, धूप, दीप आदि से माला का पूजन करे।

त्र्यम्बकादिकमंत्रं च तथा तत्र प्रयोजयेत् ।

यद्वा ॐ अघोरः ॐ ह्रीं अघोरतरः ओं ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्ररूप ह्रैं स्वाहा अनेनाभिमंत्र्य धारयेत् ।

अथवा त्र्यम्बकादिक मन्त्रों से प्रतिष्ठा करे या 'ॐ अघोरः ओं ह्रीं ओं अघोरतरः ओं ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्ररूप ह्रैं स्वाहा' इस मन्त्र से प्रतिष्ठा करके माला को धारण करे ।

माला में गुँथे हुए दानों का फल—

त्रिंशदक्षैः कृता माला धनदा जपकर्मणि ।
सप्तविंशतिसंख्यातैः कृता मुक्तिप्रदा भवेत् ॥
अक्षैस्तु पंचदशभिरभिचारफलप्रदा ॥ २ ॥

तीस रुद्राक्ष की बनाई हुई माला जपकर्म में धन को देनेवाली, सत्ताईस रुद्राक्ष की माला शरीर को सुख देनेवाली, पच्चीस रुद्राक्ष की माला मुक्ति की देनेवाली तथा पन्द्रह रुद्राक्ष की माला अभिचार फल की देनेवाली है ।

रुद्राक्षाणां पंचमुखस्तथैवैकमुखः स्मृतः ।
ये धारयंत्येकमुखं रुद्राक्षं नित्यमेव हि ॥ १ ॥

जीवन्मुक्तास्तु विज्ञेया नरास्ते नात्र संशयः ।
एकवक्त्रः शिवः साक्षात् ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ २

(केदारखण्डे)

(सोलह प्रकार के) रुद्राक्षों में पञ्चमुखी और एकमुखी रुद्राक्ष जो (मनुष्य) धारण करते हैं, वे मनुष्य जीवन्मुक्त और एकमुखी (रुद्राक्ष) धारण करनेवाले साक्षात् शिवरूप हैं। क्योंकि वह माला ब्रह्महत्या को भी दूर कर देती है ।

अष्टोत्तरशतेनापि माला सर्वार्थसाधिका ।
रुद्राक्षमूलं ब्रह्मा तु तन्नालं विष्णुरुच्यते ॥

एक सौ आठ दानों की माला सब मनोरथ पूर्ण करती है । रुद्राक्ष का मूल ब्रह्मा और नाल साक्षात् विष्णु भगवान् हैं ।

लिङ्गपूजन-मीमांसा

बेरमात्रे तु सर्वत्र पूज्यन्ते देवतागणाः ।
लिङ्गे चैव हि सर्वत्र कथं संपूज्यते शिवः ॥

सब जगह साकाररूप में ही देवगणों का पूजन किया जाता है, फिर लिङ्ग में शिव का पूजन कैसे करते हैं ? ऐसे शौनकादिकों के पूछने पर सूतजी कहते हैं, शिवजी दो प्रकार के हैं :—

(१) ‡निष्कल और (२) सकल। निष्कल होने से निराकार लिङ्ग का पूजन हुआ और सकल होने से साकार मूर्ति का पूजन माना जाता है। इनके सिवाय और सब देवता साकार ही हैं ॥ १ ॥

सब देवता सकल हैं, इससे साकार मूर्ति का पूजन किया जाता है, किन्तु शिवजी साकार निराकार दोनों हैं, इस लिए दोनों प्रकार से पूजन करते हैं ॥ २ ॥

'वेर' प्रतिमा का नाम है। इस विषय में शिवजी ने स्वयं कहा है कि लिङ्ग और वेर दोनों समान हैं तो भी पूजनेवालों को लिङ्ग का ही पूजन करना चाहिए। इस वास्ते मुक्ति के चाहनेवालों को लिङ्ग का पूजन करना श्रेयस्कर है। अतएव लिङ्ग का ही पूजन करना चाहिए ॥ ३ ॥

---

‡ शिवो हि द्विविधः प्रोक्तो निष्कलः सकलस्तथा।
निष्कलत्वान्निराकारं लिङ्गं तस्य सुसंगतम् ॥ १ ॥
सकलत्वात्तथा वेरं साकारं तस्य संगतम्।
अब्रह्मत्वाच्च जीवत्वात्तथान्ये देवतागणाः ॥ २ ॥
सर्वे सकलमात्रत्वादर्च्यंते वेरमात्रके।
शिवस्योभयरूपत्वाल्लिङ्गे वेरे च पूज्यते ॥ ३ ॥

श्रीमत्सूतसंहिता—

ऐश्वरं परमं तत्त्वमादिमध्यान्तवर्जितम् ।
आधारं सर्वलोकानामनाधारमविक्रियम् ॥ १ ॥

श्रीमद्विद्यारण्यकृततात्पर्य दीपिका—

इह हि भगवान् वादरायणः लोकानुग्रहैकरसिकतया परशिवस्वरूपाविष्करणप्रधानां संहितामारभमाणः महतः पुरुषार्थस्य प्रत्यूहप्राचुर्यात्तन्निवृत्तये शिष्टाचारानुमितश्रुतिबोधितकर्त्तव्यताकं परशिवस्य प्रणिधानप्रणवलक्षणं मंगलं स्वकृतं शिष्यशिक्षार्थं ग्रंथादावुपनिबध्नाति—ऐश्वरमित्यादिश्लोकद्वयेन । द्विविधं हि पारमेश्वरं रूपं । निष्कलं सकलं चेति (निष्कलस्सकलश्शंभुर्लिंगमूर्तिर्विराजते) इति सिद्धान्ते । तत्र निष्कलं शुद्धं । सकलं शंभुर्लिङ्गमूर्तिरूपं स्वप्रकाशाखण्डसच्चिदानन्दैकरसमद्वितीयं स्वप्रतिपत्तिफलं तत्प्रणिधानं प्रथमार्धेन । निष्कलस्वरूपं बोधानन्दमयं प्रणिधेयत्वेनोक्तं शैवागमे—परैक्यप्रापकं ज्ञानं वच्मि सम्यग्घिताय वः । चिदानन्दमयं पूर्णं प्रत्यक् ब्रह्मात्मना स्थितम् परे व्योम्नि शिखान्तस्थः निष्कलः परमः शिवः । चिदानन्दघनस्सूक्ष्मस्सर्वभूतानुकंपया इति । तथा सोमशंभुनापि—जगन्मूलमकर्तारं बोधानन्दमयं विभुं । निष्कलं स्वप्रकाशं च संचिन्त्य परमं शिवमिति । वृत्तेरसाक्षितया वृत्तिप्रागभावस्य च स्थितः । बुभुत्सायास्तथाज्ञोस्मीत्यापातज्ञानवस्तुनः । असत्यालंबनत्वेन सत्यः सर्वजडस्य तु ।

साधकत्वेन चिद्रूपः सदा प्रेमास्पदत्वतः। आनन्दरूपस्सर्वार्थसाध-कत्वेन हेतुना । सर्वसंबंधवत्त्वेन संपूर्णः शिवसंज्ञितः। जीवेश-त्वादिरहितः केवलः स्वप्रभश्शिवः। इति शैवपुराणेषु कूटस्थः प्रविवेचित इति च । मोहशूलोत्तरेपि—'शिवं पूर्ववदावाह्य बोधानन्दघनामृतमिति' ।स्वाधीनमायोपाधिस्वीकारेण जगन्निर्माण-नियमनपरिपालनादिकर्तृत्वमैश्वरं तदुक्तं मृगेन्द्रसंहितायां शिवं प्रस्तुत्य—'जगज्जन्मस्थितिध्वंसतिरोभावविमुक्तये । कृत्यं सकारक-फलं ज्ञेयमस्त्येतदेव हीति । तस्य द्विविधं रूपं । परमपरं च । लीलास्वीकृतपथोदीरितोपाधिविशिष्टमपरं । निरस्तसमस्तोपा-धिकं स्वप्रतिष्ठमखण्डसच्चिदानन्दैकरसमद्वितीयं परं । तत्र यत्परं तत्त्वं परमात्मभूतं त्रैकालिकबाधशून्यं । मिथ्याभूतपरिकल्पित-स्वरूपमायातत्कार्यसंस्पर्शविरहात् । ननु मायाकार्येण कालेनाव-च्छेदादेव कथं न स्पर्श इति । तत्राह । आदिमध्यान्तवर्जितमिति । स्वप्रागभावावच्छिन्नो भूतकाल आदिः स्वावच्छिन्नो वर्तमान-कालो मध्यः । स्वप्रध्वंसावच्छिन्नो भविष्यत्कालोऽन्तः । एतत्त्रितयवर्जितं । कलातत्त्वसद्भावे हि कालतत्त्वं उक्तं हि—'पुंसो जगत्कर्तृतार्थं मायातस्तत्त्वपंचकं भवति । कालो नियतिश्च तथा भूतयदृच्छा स्वभावाश्च, इति निष्कलदशायां कला सहभावी काल एव नास्ति । कुतो निष्कलपरशिवस्य परिच्छेदशंकेत्यभिप्रायः । इत्थं निष्कलप्रणिधानकृतं सकलमपि द्विविधं, समस्तजगदात्मकं

समस्तजगन्नियन्तृलीलावताररूपं चेति । अत एव हि रुद्राध्याये जगदात्मना जगन्नियंतृलीलावताररूपेण च नमस्कारः कृतः । तत्र जगदात्मना प्रणाममाह द्वितीयार्धेन । आधारमिति । यथैव हि सत्त्वमायोपाधिवशाज्जगन्नियन्तृत्वं निमित्तकारणं पारमेश्वरं तत्त्वं तमोपाधिवशाज्जगदात्मकतया तदुपादानत्वेन, एवं रजोगुणोपाधिवशात्तदाधारोपि । उक्तं हि जगन्नियन्तृत्वजगदात्मकत्वे परमेश्वरस्य । शिवो दाता शिवो भोक्ता शिवस्सर्वमिदं जगदिति, 'स्थितिसंयम-कर्ता च जगतोऽस्य जगत्स चेति' । श्रूयते—'सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेयेति' । अत्र हि सोऽकामयतेति निमित्तत्वं । बहुस्यामित्युपादानत्वं तथा पाराशर्यं सूत्रमपि—'प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्तानुपरोधादिति । यथैव सर्वलोकानामयमाधार एवमस्यापि कश्चिदन्य आधारःस्यादितीमां शंकां निरस्यति । अनाधारमिति स्वातिरिक्ताधार-रहितः । स भगवः कस्मिन्प्रतिष्ठितः ? स्वमहिम्नीति' स्वमहिम प्रतिष्ठितत्वश्रुतेः । ननु जगदाधारश्चेदाधेयजगदात्मना धर्मेण उपायापायवता विकारित्वं तस्य स्यात् उपयन्ननपयन् धर्मो विकरोति हि धर्मिणमिति न्यायात्तत्राह अविक्रियमिति । कल्पितत्वेन जगतो न स्वाश्रयविकारहेतुता । न हि मरुमरीचिका जलैर्मरुभूमिरार्द्री क्रियत इत्यर्थः ॥ १ ॥

अनन्तानन्दबोधांबुनिधिमद्भुतविक्रमम् ।
अंबिकापतिमीशानमनिशं प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥

इदानीं जगन्नियन्तृलीलावताररूपेण प्रणिधानमाह—अनन्तेति द्वितीयश्लोकेन। अवतारो हि ध्यानपूजार्थं शिवेन स्वीक्रियते तदुक्तं सुप्रभेदे—यतीनां मन्त्रिणाञ्चैव ज्ञानिनां योगिनां तथा। ध्यानपूजा-निमित्तं हि तनुं गृह्णाति मायया, इति अद्भुताः। विक्रमास्त्रिपुरदहना-दयो यस्य तं। अंबिकायाः पतिः अम्बिकापतिं विजयपरिणयनादयः परमेश्वरस्य लीला दर्शिताः। तर्हि प्राकृतपुरुषवदेव रागद्वेषादि-दोषसंभवात्संसार्येवासौ इति। नेत्याह ईशानमिति। संसारिणो हि रागद्वेषादिवशीकृत त्वात्पुरुषान्तरपरतन्त्रत्वाच्च स्वयम-नीशाना ईशवन्तश्च। शिवस्तु लीलयैव विजयपरिणयनादिव्या-पाराना चरन्नपि रागद्वेषादिविरही सर्वजगदीशिता च न पुरुषान्तर-परतंत्र इति न लौकिकसम इत्यर्थः। ननु लोकवदेव शिवस्यापि सर्वव्यवहाराश्श्रूयन्ते। अतएवषां लीलारूपता कुत इत्यत आह—अनन्तेति। अन्तः परिच्छदः तद्रहितयोरानन्दबोधयोरंबु-धिस्समुद्रः अतः तत्कृतः परिच्छदविरहात्परमेश्वरयोरानन्दज्ञान-योर्न लौकिकानन्दज्ञानवदुत्पत्तिविनाशवत्वं वस्तुकृतपरिच्छदवि-रहाच्च तयोरखण्डैकरसत्वमितीशानः। अतिशायिनो वस्त्वन्त-रस्याभावेन तस्य निरतिशयत्वं चेति कुतो लौकिकसाधारण्यशङ्का-वकाश इत्यर्थः। यद्यप्यंबुनिधिरन्तवान्सातिशयश्च तथापि लौकिनां समुद्रेऽन्तवत्त्वसातिशयत्वविरहाभिमानात्तदभिमतदृष्टान्तेनैव परमेश्व-रस्यात्यंतिकमानन्त्यंनिरतिशयत्वं च दर्शयितुं अंबुनिधित्वेन रूपणं

कृतमिति । ननु लौकिका अपि सर्वात्मकादीश्वरादभिन्ना एवेति कथं तदीयौ ज्ञानानन्दौ न तत्सदृशाविति । सत्यं तत्सदृशौ । अज्ञानेनावृतत्वात्तु तत्सादृश्यं न ते जानन्ति । उक्तं हि । 'अज्ञातेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः इति । अतस्तिरोहितज्ञानत्वाल्लौकिकानां व्यापारा दुःखमया एव न लीलाः । अनावरणपरमानन्दज्ञानत्वेन तु परमेश्वरस्य विजयपरिणयनादिव्यापारा लीला एवेत्यर्थः । नमामीति निष्कलपरशिवस्य तद्रूपतयाऽवस्थानमेव प्रणामः । सकलस्य तु ध्यानस्तुतिपूजात्मकः । तदुक्तं सुप्रभेदे—ध्यानपूजाविहीनं यन्निष्कलं तद्विधायकम् । तत्तस्मात्सकलं शंभुं निष्कलं संप्रपूजयेत्' इति ॥ २ ॥

देवदेवस्त्वमेयात्मा अजेयो विष्णुरव्ययः ।
सर्वरूपभवं ज्ञात्वा लिंगेऽर्चयति प्रभुः ॥

महाभारत के द्रोणपर्व में अश्वत्थामा से व्यासजी ने कहा है कि प्रकाशरूप, प्रमाण नहीं करने और नहीं जीतने योग्य, जगत् को विस्तारित करनेवाले, अविनाशी और सर्वस्वरूप शिव ही हैं । ऐसा जानकर लिङ्ग में ही प्रभु का पूजन करे ।

द्रोणपर्व में श्रीकृष्णचन्द्रजी ने अर्जुन की बड़ाई करते हुए अश्वत्थामा के प्रति कहा है—

जन्मकर्मतपोयोगास्तयोस्तव च पुष्कलाः ।
आभ्यां लिंगे चिंतो देवस्त्वयाऽर्चायां युगे युगे ॥२॥

जन्म, कर्म, तप, योग और उनकी स्तुति भी बहुत है। इन दोनों ने युग-युग में लिङ्गरूपी शिवजी का पूजन किया है, इसलिए प्रतिमास्वरूप शिव का पूजन श्रेष्ठ है।

प्रतिमायां प्रयत्नेन कृतयां सांगपूजया।
यत्फलं तत्फलं प्राप्यं व्यंगया लिंगपूजया ॥ १ ॥

(शिवरहस्ये)

शिवरहस्य में कहा है—सावधानी के साथ प्रतिमा में साङ्ग पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, वही फल अङ्गहीन भी लिङ्ग-पूजा से होता है।

योऽर्चायामर्चयेद्भक्त्या पूर्णं वर्षशतं नरः।
लिङ्गमेकदिनं पूज्यं सममेत्तन्न संशयः ॥ १ ॥
शंभोर्लिङ्गं समभ्यर्च्य पुरुषार्थचतुष्टयम्।
प्राप्नोत्यत्र पुमान्सद्यो नात्र कार्या विचारणा ॥२॥

स्कन्दपुराण में कहा है कि सौ वर्ष तक मूर्ति का पूजन करे और एक दिन लिङ्ग का पूजा करे, वह सौ वर्ष के पूजन के समान है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १ ॥ शिवलिङ्ग का पूजन करने से अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, इन चारों पदार्थों को मनुष्य प्राप्त कर लेता है। इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ २ ॥

अयमेव परो धर्मस्त्विदमेव परं तपः ।
इदमेव परं ज्ञानं शिवलिङ्गं यदर्च्यते॥ १ ॥

(वायुपुराणे)

वायुपुराण में कहा है कि यही एक बड़ा धर्म है, यही एक बड़ा तप है और यही परमज्ञान है कि शिवलिङ्ग का पूजन करे॥१॥

लिंगे मांपूजयेद्धरं लिङ्गरूपधरो ह्यहम् ॥ (सौरपुराणे)

सौरपुराण में भगवान् विष्णु के प्रति शिवजी का वचन है—हे हरे! लिङ्ग में मेरा अर्चन करो क्योंकि मैं लिङ्गरूप हूँ।

जन्मांतरसहस्रेषु यज्ञदानादिभिर्द्विजाः ।
नराणां क्षीणपापानां श्रद्धा लिङ्गार्चने भवेत् ॥१॥

(लिङ्गे)

वसिष्ठ का वचन है—हे ब्राह्मणो! हजारों जन्मों के तप, दान और यज्ञ करने से जिन पुरुषों के पाप नष्ट हो जाते हैं, लिङ्ग-पूजन में उनकी श्रद्धा होती है॥ १ ॥

कलौ लिङ्गार्चनं श्रेष्ठं यथा लोके प्रदृश्यते ।
तथा नास्तीति नास्त्यन्यत् शास्त्राणामेव निश्चयः ॥

(शिवरहस्ये)

कलियुग में लिङ्ग का पूजन श्रेष्ठ है। जैसा लोक में देखते हैं कि शिवजी के मूत्र त्याग करने की इन्द्रिय का पूजन है, सो बात नहीं है। यह सब शास्त्रों का निश्चय है।

लिङ्गार्चनविधिज्ञो यः लिङ्गार्चनरतः सदा ।
त्र्यक्ष एव स विज्ञेयः साक्षाद्द्व्यक्षोपि मानवः ॥

(काशीखण्डे)

जो पुरुष लिङ्गपूजा की विधि को जानता और लिङ्ग-पूजा करने में सदा प्रीति रखता है, वह प्रत्यक्ष दो नेत्रवाला मनुष्य होता हुआ भी त्रिनेत्र शिव है ।

रसलिङ्गं ब्राह्मणानां सर्वाभीष्टप्रदं भवेत् ।
† बाणलिङ्गं क्षत्रियाणां महाराज्यप्रदं भवेत् ॥१॥
स्वर्णलिङ्गं तु वैश्यानां महाधनपतित्वदम् ।
शिलालिङ्गन्तु शूद्राणां महाशुद्धिकरं शुभम् ॥ २ ॥

(विश्वेश्वरसंहिता)

पारे का लिङ्ग ब्राह्मणों के सब मनोरथ को पूरा करता और बाणलिङ्ग (नर्मदेश्वर) क्षत्रियों को बड़े राज का देनेवाला है ॥ १ ॥ सोने का लिङ्ग वैश्यों को महा धनपति करता है और शिलालिङ्ग शूद्रों की परमशुद्धि करनेवाला है ॥ २ ॥

कृते मणिमयं लिङ्गं त्रेतायां हेमसंभवम् ।
द्वापरे पारदं श्रेष्ठं पार्थिवं तु कलौ युगे ॥ १ ॥

(लैङ्गे)

---

† नर्मदाजलमध्यस्थं बाणलिङ्गमिति स्थितम् ॥
नर्मदाजल में रहनेवाले लिङ्ग को बाणलिङ्ग कहते हैं ।

सत्ययुग में मणि का लिङ्ग, त्रेता में सोने का लिङ्ग, द्वापर में पारे का लिङ्ग और कलियुग में मिट्टी का लिङ्ग बनाकर पूजन करना चाहिए ॥ १ ॥

रौद्रं लिङ्गं महाविष्णुर्भक्त्या शुद्धं च पार्थिवम् ।
चारु चित्रं समभ्यर्च्य लब्धवान्परमं पदम् ॥

रुद्र के मनोहर और शुद्ध पार्थिव लिङ्ग का पूजन करने से विष्णु भगवान् परमपद को प्राप्त हुए थे ।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालमथ वा नरः ।
लिङ्गं महीजं सम्पूज्य शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥

दिन में एक काल, दो काल अथवा त्रिकाल में पार्थिव-लिङ्ग का नियम से पूजन करनेवाले मनुष्य शिव-सायुज्य मुक्ति को पाते हैं ।

यो न पूजयते लिङ्गं ब्रह्मादीनां प्रकाशकम् ।
शास्त्रवित्सर्ववेत्तापि चतुर्वेदः पशुस्तु सः ॥

(पाद्मे)

पद्मपुराण में लिखा है कि जो मनुष्य ब्रह्मादिकों के प्रकाश करनेवाले शिवलिङ्ग का पूजन नहीं करता, वह शास्त्र और अङ्ग सहित चारों वेदों का जाननेवाला भी हो तो पशु है ।

अहरहः शिवलिङ्गमनभ्यर्च्य नाश्नीयात् फलमन्नम-न्यद्वा यद्यश्नीयाद्रेतोभक्षी भवेत् ।

बृहज्जाबालोपनिषद्—

बृहज्जाबाल उपनिषद् में कहा है कि प्रति दिन शिवलिङ्ग का पूजन न करके जो मनुष्य भोजन करता है तो वह वीर्य खाने का अपराधी होता है ।

यस्येन्द्रियाणि पूजार्थं भवन्ति शुभदेहिनः ।
कदाचिदपि वा विप्र सफलं तस्य जीवितम् ॥१॥

जिस उत्तम देहधारी की इन्द्रियाँ पूजा के लिए प्रवृत्त होती हैं, उसी का जीना सफल है ॥ १ ॥

स्त्रियों को लिङ्गपूजा का अधिकार—

स्त्रीणां सुपार्थिवं लिङ्गं सभर्तॄणां विशेषतः ।
विधवानां निवृत्तानां रसलिङ्गं विशिष्यते ॥
विधवानां प्रवृत्तानां स्फाटिकं परिकीर्त्तितम् ॥१॥

स्त्रियों को पार्थिवलिङ्ग का पूजन करना चाहिए और सुहा-गिनों को तो अवश्य ही पार्थिव-पूजन करना चाहिए जो विधवा स्त्री संसार से (सांसारिक भोगों से) विरक्त हों, उनको पारद लिङ्ग पूजना श्रेयस्कर है और जो संसार में प्रवृत्त (आसक्त) हों, उन विधवा स्त्रियों को बिल्लौर के लिङ्ग का पूजन करना चाहिए ॥१॥

पुरा मृन्मयं लिङ्गमर्च्य लक्ष्मी प्रयत्नतः ।
जाता सौभाग्यसंपन्ना महादेवप्रसादतः ॥

(सनत्कुमारसंहिता)

पहले यत्नपूर्वक (जगन्माता विष्णुवल्लभा) लक्ष्मीजी मृत्तिका की लिङ्ग का पूजन करके महादेवजी की कृपा से सुहाग से पूरी हुई थीं ।

प्रसवो जायते यस्यास्तया तु शैवपूजनम् ।
कर्तव्यं मानसं नित्यं दशाहांतं प्रयत्नतः ॥
दशाहे समतीते तु कृत्वा स्नानं यथाविधि ॥ १ ॥
शिवलिङ्गार्चनं कार्यं द्विजस्त्रीभिर्द्विजैरिव ।
होमोऽयं पुरुषाणां तु स्त्रीणां तु न कदाचन ॥ २ ॥

प्रसवकाल में स्त्रियों को दस दिनों तक मानस शिव-पूजन करना चाहिए और दस दिन के अशौच (वृद्धिसूतक) निवृत्त होने पर विधिपूर्वक स्नान करके द्विजाति स्त्रियों को द्विजातियों की तरह ही लिङ्गार्चन करना चाहिए, परन्तु होम केवल पुरुषों को ही विहित है, स्त्रियों को नहीं ॥ १ ॥ २ ॥

अभिषेक के विषय में विवेचना—

केवलेनोदकेनैव स्नापनं मे भवेत्सदा ।
गंधोदकं शतगुणं पंचगव्यं ततोधिकम् ॥१॥

तस्माच्छतगुणं चीरं सहस्रं कापिलं भवेत् ।
ततः शतगुणं प्रोक्तं सर्पिषा स्नानमेव च ॥२॥
कापिलानामभावेन सर्पिषा स्नापयेच्च माम् ।
चमामि देवि तस्याहमपराधान्बहूनपि ॥ ३ ॥

(सनत्कुमारसंहितायाम्)

केवल जल से मेरा नित्य स्नान होता है, जल से स्नान कराने की अपेचा सौगुना अधिक फल सुगन्धित जल के अभिषेक से होता है। उससे भी अधिक दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र, इन (पञ्चगव्य) पाँचों के स्नान से होता है। पंचगव्य से भी सौगुना अधिक फल दूध के अभिषेक से होता है। साधारण दूध से सौगुना अधिक फल कपिला (पीली) गौ के दूध से होता है। हे देवि ! कपिला के दूध से अथवा घी से जो पुरुष मुझको स्नान कराते हैं, उनके बहुत से अपराधों को मैं चमा कर देता हूँ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

वर्ज्जयेच्छिवपूजायां शंखतोयं विशेषतः ।

शिवपूजा में शंख का जल विशेष करके त्याज्य है।

शिव-पूजन के लिए ग्राह्य जल—

नद्याः समुद्रगामिन्याः नदाद्वा स्वयमाहृतम् ।
वस्त्रपूतं च शीतं च विशिष्टं शिवपूजने ॥१॥ (स्कान्दे)

वस्त्रपूतैर्जलैर्लिङ्गं स्नापयित्वा ममामराः ।
लक्षाश्वमेधजं नित्यं पुण्यमाप्नोति मानवः ॥ २ ॥

(काशीखण्डे)

समुद्र में पहुँचनेवाली नदी से अथवा साधारण नदी से लाया जल और कपड़े से छना हुआ शीतल जल शिव-पूजन में ग्राह्य माना गया है। काशीखण्ड में कहा है कि वस्त्र से छने हुए जल से शिवलिङ्ग को स्नान करानेवाले मनुष्य दस लाख अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

निषिद्ध जल—

कलुषं क्रिमिसंमिश्रमौषरं पल्वलोदकम् ।
अशुद्धभूतलस्थं च शिलागतजलं च यत् ॥ १ ॥
सदा छायायुतं त्याज्यमंत्यजातिनिषेवितम् ।
इत्यादिदोषसंयुक्तं वर्ज्यन्तोयं शिवार्चने ॥ २ ॥

जिसमें कीड़े पड़ गये हों, जो ऊषर भूमि में भरा हुआ हो, छोटे तालाब का जल, अशुद्ध पृथ्वी का पानी, शिला के गढ़े में जो इकट्ठा हुआ हो वह पानी, जिसके ऊपर सदा छाया रहे, जिसमें नीच जाति पानी ग्रहण करें, इन दोषों से युक्त जल को त्याग देना चाहिए ॥ १ ॥ २ ॥

शूद्रानीतं स्त्रिया नीतं वामहस्ताहृतं तथा ।
अन्यपूजावशिष्टं च जलं त्याज्यं शिवार्चने ॥१॥

शूद्र का लाया, स्त्री का लाया, बायें हाथ से लाया और दूसरे किसी पुरुष का पूजन से बचा हुआ शेष जल शिव-पूजा में त्याग करने योग्य है ॥ १ ॥

अक्षत—

अर्चयिष्यति यो नित्यमखंडैः शालितंदुलैः ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥१॥
यस्तु नित्यं तिलैः कृष्णैः श्वेतैर्वा पूजयिष्यति ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥२॥
प्रियंगुतंदुलैर्नित्यं यो मामभ्यर्चयिष्यति ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥३॥

भगवान् शिवजी ने अपने मुखारविन्द से कहा है कि जो पुरुष साबूत चावलों से नित्य मेरा पूजन करते हैं, उनको मैं शिव-लोक में ले जाता हूँ। यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥ १ ॥ जो पुरुष नित्य काले या श्वेत तिलों से मेरा पूजन करते हैं, उनको मैं अपने लोकों में ले जाता हूँ, यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥ २ ॥ और हे प्यारी ! कँगनी के चावलों से जो मेरी पूजा करता है, उसको शिवलोक में ले जाने की मेरी प्रतिज्ञा है ॥३॥

चन्दन —

लिङ्गस्य लेपनं कुर्याद्दिव्यगंधैर्मनोरमैः ।
वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते ॥ १ ॥
सुगंधलेपनात्पुण्यं द्विगुणं चन्दनस्य च ।
चन्दनाच्चागुरोर्ज्ञेयं पुण्यमष्टगुणाधिकम् ॥ २ ॥
कृष्णागुरौ विशेषेण द्विगुणं फलमिष्यते ।
तस्माच्छतगुणं पुण्यं कुंकुमस्य विधीयते ॥ ३ ॥
(सौरपुराणे)

चंदनागुरुकर्पूरनाभिरोचनकुंकुमैः ।
लिङ्गमेतैः समालिप्य गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥
(स्कन्दपुराणे)

जो मनुष्य शिवजी को दिव्य, सुगंधित और मन को प्रसन्न करनेवाले चन्दन का लेप करता है, वह दिव्य सौ करोड़ वर्ष तक शिव लोक में वास करता है ॥ १ ॥ सौरपुराण में लिखा है कि सुगंधि के लेप से जो पुण्य होता है, उससे दुगुना चन्दन से और चन्दन से भी अठगुना अधिक फल अगर से होता है ॥ २ ॥ साधारण अगर से द्विगुण पुण्य काले अगर से होता और काले अगर से सौ गुना केसर के चन्दन के लेप से होता है ॥ ३ ॥ स्कन्दपुराण में कहा है कि चन्दन, अगर, कस्तूरी और केसर

इनसे शिवलिङ्ग का लेप करनेवाला पुरुष शिवजी के गण का स्वामी होता है ॥ ४ ॥

बिल्वपत्र और पुष्प--

शिवपूजनं सति संभवे बिल्वपत्ररहितं न कार्यम् ।

बिल्वपत्र के मिलने की जगहों में बिल्वपत्र के बिना शिव-पूजन नहीं करना चाहिए।

नित्यमार्द्रैरनाविद्धैर्बिल्वपत्रैः सदाशिवम् ।
पूजयस्व महादेवं तस्मान्माप्रमदो भव ॥ १ ॥

(ब्रह्माण्डपुराणे)

ब्रह्माण्डपुराण में कहा है कि नित्य गीले और बिना छेद-वाले बिल्वपत्रों से सदाशिव महादेवजी का पूजन सावधानी के साथ करना चाहिए ॥ १ ॥

एकं बिल्वदलं रम्यं मद्भक्तेनार्पितं मयि ।
अनंताघहरं नूनं सत्यमेवोच्यते मया ॥ २ ॥

(सौरपुराणे)

मेरे भक्त का मेरे पर चढ़ाया हुआ एक ही बिल्वपत्र अनन्त पापों का नाश करता है, मैं यह निश्चय और सत्य कहता हूँ ॥२॥

पंचाक्षरेण मन्त्रेण बिल्वपत्रैः शिवार्चनम् ।
करोति श्रद्धया यस्तु स गच्छेदैश्वरं पदम् ॥(ब्रह्माण्डे)

जो पुरुष पंचाक्षर मंत्र पढ़कर बिल्वपत्रों से शिव-पूजन करता है, वह (भक्त) शिव पद को पाता है ।

बिल्वपत्र तोड़ने में निषिद्ध दिन—

अमारिक्तासु संक्रान्तावष्टम्यामिंदुवासरे ।
बिल्वपत्रं न च छिंद्याच्छिंद्याच्चेन्नरकं व्रजेत् ॥ १ ॥
(लैङ्गे)

अमावस्या, रिक्ता (चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी) संक्रांति, अष्टमी और सोमवार को बिल्वपत्र तोड़नेवाला नरकगामी होता है ॥ १ ॥

बिल्वपत्र के अभाव में—

शुष्कैःपर्युषितैः पत्रैरपि बिल्वस्य नारद ।
पूजयेद्गिरिजानाथमलाभे यत्नतो नरः ॥ (शिवरहस्ये)

शिवरहस्य में शिवजी ने नारद से कहा है कि हे नारद ! नवीन बिल्वपत्र न हो तो मनुष्य यत्नपूर्वक सूखे और बासी बिल्वपत्र से ही शिवजी का पूजन करे ।

वर्ज्यं पर्युषितं पुष्पं वर्ज्यं पर्युषितं जलम् ।
अवर्ज्यं जाह्नवीतोयं तुलसीपद्मबिल्वकम् ॥
(काशीखण्डे)

बासी फूल और बासी जल वर्जित है, किन्तु गङ्गाजल, तुलसी के दल, कमल के फूल और बिल्वपत्र, ये बासी भी वर्जित नहीं हैं।

तुलस्यां बिल्वपत्रे तु लतुजेषु च सर्वशः ।
न पर्युषितदोषोऽस्ति मालाकारगृहे तथा ॥

(शिवरहस्ये)

तुलसीपत्र, बिल्वपत्र, नागरपत्र और माली के घर रहे हुए पुष्पादिक में बासीपन का दोष नहीं है ।

पर्युषिता न तुलसी मासमात्रेण दुष्यति ।
चत्वारिंशद्दिनं बिल्वं कमलं त्रिदिनं शुभम् ॥१॥

बासी तुलसीपत्र एक महीने तक दूषित नहीं होता, चालीस दिन तक बिल्वपत्र और तीन दिन तक कमल शुभ कहा गया है ॥ १ ॥

जातीपत्रैः फलैश्चापि तथा कुंकुमके सरैः ।
सुगंधपुष्पैर्यत्नेन सदा पूज्यो महेश्वरः ॥

(सिद्धान्तशेखरे)

जातीपत्र, जातिफल, कस्तूरी, केसर और सुगन्धित फूलों से सदा यत्न करके शिवलिङ्ग का पूजन करे ।

नैषां पर्युषितत्वं च स्थितं संवत्सरावधि ।

ऊपर गिनाये जातीपुष्पादिकों में एक वर्ष बीतने तक बासीपन का दोष नहीं होता।

अर्पितान्यपि विल्वानि प्रक्षाल्य च पुनः पुनः।
शंकरायार्पणीयानि न नवानि यदि क्वचित्॥

(स्कान्दे)

(विल्वपत्र ताजा न मिले तो) चढ़ाये हुये विल्वपत्र को फिर जल से धोकर शिवलिङ्ग पर चढ़ावे।

चूर्णीकृतान्यपि प्राज्ञैः विल्वपत्राणि वैदिकैः।
संपाद्य पूजयेदीशं पत्राभावे विचक्षणः॥

(पाद्मे)

नवीन विल्वपत्र नहीं मिले तो बुद्धिमानों को चाहिए कि विल्वपत्र का चूरा ही इकट्ठा करके शिवजी पर चढ़ावे।

पुष्पमूर्ध्वमुखं योज्यं पत्रं योज्यं त्वधोमुखम्।
फलं तु सम्मुखं योज्यं यथोत्पन्नं तथार्पयेत्॥ (स्कान्दे)

फूल को ऊपर मुख करके, पत्र को नीचे मुख करके और फल को जैसा उत्पन्न हुआ हो, वैसे ही भगवान् को समर्पित करे।

विल्वपत्रैर्महादेवं स्वाहृतैरेव कोमलैः ।
यः पूजयति यत्नेन पदं प्राप्नोति शाङ्करम् ॥
(शिवरहस्ये)

जो पुरुष अपने लाये हुए कोमल बिल्वपत्रों से यत्नपूर्वक शिवजी का पूजन करता है, वह शिवपद को प्राप्त होता है ।

अरक्तैरिति रक्तपुष्पनिषेधो रक्तोत्पलकर्णिकारव्यतिरिक्तविषयकरक्तोत्पलैरिति ।

'पुष्प लाल रङ्ग के न हों ।' यह लाल फूल का निषेध लाल कमल और लाल कनेर के सिवाय और फूलों के विषय में कहा है ।

रक्तोत्पलैः कर्णिकारैर्यः करोति ममार्चनम् ।
स भाग्यवान् मनुष्येषु मम स्यात्प्रियकृत्तमः ॥
(गरुड़पुराण)

जो पुरुष लाल कमल और लाल कनेर से मेरा पूजन करता है, वह मनुष्यों में भाग्यवान् और मेरा बहुत ही प्यारा होता है ।

देवार्थं दलं पुष्पमस्तेयं मनुरब्रवीत् ।
याचितैः पत्रपुष्पाद्यैर्यः करोति सुरार्चनम् ॥
वृथा भवति सा पूजा ह्यपराधी भवेत्ततः ।
(कूर्मे)

देवता के निमित्त पत्र पुष्प की चोरी नहीं करे, मनुजी ने कहा है कि माँगे हुए पत्र पुष्पों से जो पुरुष देवपूजा करता है, वह पूजा निष्फल होती है। फल तो पाता नहीं, बल्कि अपराधी होता है।

देवोपरि धृतं यच्च वामहस्तधृतं च यत्।
अधोवस्त्रे धृतं यच्च जलांतःक्षालितं च यत्॥
देवतास्तम्भबद्धं च पुष्पं निर्माल्यतां व्रजेत्।

दक्ष प्रजापति ने कहा है कि देवता के ऊपर चढ़ाया हुआ, बायें हाथ में धारण किया हुआ, धोती में लिया हुआ, धोया हुआ और देवता के स्तंभ से बाँधा हुआ फूल निर्माल्य होजाता है। इससे वह पूजा के काम का नहीं रहता।

संभृतैरन्यकुसुमैः पूजनीयो महेश्वरः।
वृंतहनैः पूजनीयो वृहतीकुसुमैः शिवः॥

(स्कान्दे)

वृहती के सिवाय और फूल नाल सहित लेकर और नाल विना वृहती के पुष्पों से पूजन करना चाहिए।

शैवागमेषु सर्वत्र प्रशस्तं करवीकरम्।
तस्य मध्ये स्थितो देवो लिङ्गाकारः सपीठकः॥

अर्पितं तच्च निर्माल्यं पुनः प्रोच्य शिवं यजेत् ।
करवीरसहस्रेभ्यः शमीपुष्पं विशिष्यते ॥
शमीपुष्पसहस्रेभ्यो ह्येकं धत्तूरकं वरम् ।
धत्तूरकसहस्रेभ्यो बृहत्पुष्पं विशिष्यते ॥

(सिद्धान्तशेखरे)

शैवागम शास्त्रों में सब जगह कनेर के फूल की स्तुति की गयी है, क्योंकि उसके बीच में आधार के सहित लिङ्ग-स्वरूप देव स्थित हैं। चढ़ा हुआ कनेर का फूल निर्माल्य नहीं होता, धोकर फिर शिवजी को चढ़ाया जा सकता है। सहस्र कनेर के फूलों के समान एक शमी का पुष्प होता है ॥ २ ॥ हजार शमी–पुष्पों के बराबर एक धतूरे का पुष्प और हजार धतूरें के पुष्प के समान एक बृहती का पुष्प होता है।

बृहत्पुष्पसहस्रेभ्योऽप्यपामार्गो विशिष्यते ।

हजार बृहत्पुष्प के समान अपामार्ग (कुँगा चिड़चिड़ा) का फूल प्रशस्त कहा है। जहाँ कहीं अपामार्ग का पुष्प लेना लिखा हो, वहाँ पत्र ग्रहण करना चाहिए।

अपामार्गसहस्रेभ्यः श्री नीलोत्पलं वरम् ॥

हजार अपामार्ग के पत्रों से एक कमल श्रेष्ठ है।

बृहतीकुसुमैर्भक्त्या यो लिङ्गं सकृदर्चयेत् ॥
गवामयुतदानस्य फलं प्राप्य शिवं व्रजेत् ॥

जो पुरुष भक्तिपूर्वक एक बार भी बृहती (कटैया) के फूलों से शिवलिङ्ग का पूजन करता है, वह दस सहस्र गोदान करने का फल पाकर शिवरूप हो जाता है।

वर्जित फूल—

केशकीटापविद्धानि शीर्णपर्युषितानि च ॥
उग्रगंधानि पुष्पाणि शूद्रानीतानि वर्जयेत् ॥
एरंडपत्रैश्च तथा वासोभिः कुत्सितात्मभिः

(सौरपुराणे)

अब वर्जित फूल कहते हैं—बाल और कीड़े से बींधे हुए, कुम्हलाये हुए, वासी, जो वृक्षों से गिरे और सड़े हुए हों, उनको त्याग देना चाहिए। क्रूर गंधवाले अर्थात् जिनकी सुगन्धि से चित्त खराब हो उसे और शूद्र के लाये हुये, एरंड के पत्ते और मैले कपड़े में बँधे हुए, नीच आचरणवाले पुरुष द्वारा लाये हुए पुष्प शिवजी को अर्पण न करे।

एकं वापि तु धत्तूरं कार्तिके सोमवासरे।
यदि दद्यान्मम प्रीत्या मयि लीनो भविष्यति ॥

(शिवरहस्ये)

जो पुरुष कार्तिक के महीने में सोमवार को मेरी प्रीति के लिए धतूरे का एक फूल भी मुझे देता है (याने मेरे पर चढ़ाता है) वह मेरे में अर्थात् शिवरूप में लय होजाता है।

पुष्प चढ़ाने का प्रकार—

मध्यमानामिकामध्ये पुष्पं संगृह्य पूजयेत् ।
अंगुष्ठतर्जन्यग्राभ्यां निर्माल्यमपनोदयेत् ॥

(प्रयोगपारिजाते)

मध्यमा और अनामिका, इन दोनों अँगुलियों के बीच में फूल ग्रहण करके शिवजी को अर्पण करे और अँगूठा तथा तर्जनी के अग्रभाग से चढ़े हुए पुष्पों को हटावे।

तुलसीदलमात्रेण यः करोति शिवार्चनम् ।
कुलकैविंशमुद्धृत्य शिवलोके महीयते ॥

(नारदीयपुराणे)

जो पुरुष तुलसी के एक पत्र से शिवजीका पूजन करते हैं, वे अपनी इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार करके शिवलोक में रहते हैं।

धूप—

चन्दनागरुकर्पूरकुष्ठगुग्गुलचूर्णकैः ।
घृतेन मधुना चैव सिद्धो धूपः प्रशस्यते ॥१॥

(वायवीयसंहितायाम्)

गुग्गुलं घृतसंयुक्तं साक्षाद्गृह्णाति शंकरः ।
गोमूत्राद्गुग्गलुर्जातः सुगन्धिः प्रियदर्शने ॥ २ ॥
स धूपः सर्वदेवानां शिवस्य च विशेषतः ॥ ३ ॥

कृष्णागुरुं सकर्पूरं धूपं दद्याच्छिवाय वै ।
नैरं तर्पणमासार्द्धं तस्य पुण्यमनंतकम् ॥ ४ ॥

(लैङ्गे)

चंदन (१) अगर (२) कपूर (३) कूठ (४) गूगुल (५) के चूर्ण में घी और शहद मिलाकर बनाया हुआ धूप श्रेष्ठ होता है ॥ १ ॥ सौरपुराण में कहा है कि घी मिले हुए गूगुल को साक्षात् शिवजी ग्रहण करते हैं। सुगंधित और देखने में प्यारा गूगुल गोमूत्र से उत्पन्न हुआ है ॥ २ ॥ धूप सब देवताओं और शिवजी को विशेष प्यारा है। लिङ्गपुराण में कहा है कि जो पुरुष पन्द्रह दिन तक नित्य कपूर मिले हुए काले अगर का धूप शिवजी को देता और जल से तर्पण करता है, उसको अनन्त पुण्य होता है ॥ ४ ॥

दीप—

कपिलासंभवे नैव घृतेनातिसुगन्धिना ।
नित्यं प्रदीपितो दीपः शस्तः शंकरपूजने ॥ १ ॥

शस्त इत्यनेन कपिलाघृतासंभवे कपिलाव्यतिरिक्तानां गवां घृतेनापि दीपोदेय इति बोधितम् ॥

(वायवीयसँहिता

कपिला गौ के न मिलने पर किसी भी गौ के अति सुगंधित घी से प्रज्वलित किये हुए दीपक शिव-पूजन में श्रेष्ठ हैं ॥१॥ 'कपिलासंभवे' इस विशेषण से कपिला गौ के घी के न होने पर कपिला से इतर गौवों के घृत से ही दीपक प्रकाश करे। ऐसा जानना चाहिये।

कुसुंभस्य च तैलेन दीपा दत्ताः शिवालये।
ज्ञानिनस्ते भविष्यन्ति दीपदानफलेन हि ॥

(स्कान्दे)

कुसुम्भ के तेल से जो मनुष्य मन्दिर में दीपदान करते हैं, वे दीपदान के फल से ज्ञानी होते हैं।

ये दीपमालां कुर्वन्ति कार्तिक्यां श्रद्धयान्विताः।
यावत्कालं प्रज्वलन्ति दीपास्ते लिंगमग्रतः ॥
तावद्युगसहस्राणि दाता स्वर्गे महीयते ॥

जो पुरुष कार्तिक की अमावस्या को परम श्रद्धा से शिवजी के आगे दीपों की पंक्ति बनाकर प्रकाश करते हैं, वे प्रकाश करते हुए दीपक जितने काल तक प्रकाशित रहते हैं। वह दीपक दान करनेवाला प्राणी उतने सहस्र युग तक स्वर्ग में निवास करता है।

नैवेद्य—

घृतसूपयुतैः सीक्थैः पुण्यं शतगुणोत्तरम् ।
उपदंशयुतैर्ज्ञेयं पुण्यं दशगुणोत्तरम् ।

(शिवधर्मोत्तरे)

साधारण नैवेद्यों की अपेक्षा घी और शर्करा से मिले हुए नैवेद्य अर्पण करने से सौगुना अधिक पुण्य होता है और उपदंशयुक्त (पूड़ी इत्यादि) नैवेद्य चढ़ाने से दसगुना अधिक पुण्य होता है ।

सुगन्धिशालिनैवेद्यैर्विज्ञेयमयुताधिकम् ।

सुगंधित चावलों के नैवेद्य से दसहजारगुना अधिक (फल) जानना चाहिये ।

तांबूल—

❀ मुखवासं च यो दद्याद्दत्त्वा नैवेद्यमुत्तमम् ।
संख्या समुद्ररत्नानां कथंचित्कर्तुमिष्यते ॥१॥
मुखवासादि दानस्य कः संख्यामत्र कारयेत् ॥

(काशीखण्डे)

जो पुरुष उत्तम नैवेद्य अर्पण करके मुखवास के लिए तांबूल का अर्पण करे तो समुद्र के रत्नों की भी चाहे कोई किसी

❀ मुखवास नाम ताम्बूल का है

प्रकार गिनती करले, लेकिन ताम्बूल अर्पण करने के फल की गिनती कौन कर सकता है ॥ १ ॥

यज्ञोपवीत—

उपवीतन्तु यो दद्याद्ब्रह्मवेत्तृत्वमेव च ।
भूषणानि च यो दद्यादनापत्त्वमवाप्नुयात् ॥१॥
मृदु शुक्लं सपीतञ्च पट्टसूत्रादिनिर्मितम् ।
दत्त्वोपवीतं रुद्राय भवेद्वेदान्ततः सुखी ॥२॥

जो मनुष्य ब्रह्मज्ञान करानेवाले यज्ञोपवीत को शिवजी के अर्पण करता अथवा आभूषण चढ़ाता है, वह सब प्रकार की आपत्तियों से छुटकारा पा जाता है। जो उपासक रेशम के बने हुए मुलायम, सूखे और पीले यज्ञोपवीत शिवजी को प्रदान करता है, वह सब प्रकार से सुखी रहता है ॥ १ ॥ २ ॥

नीराञ्जन—

नीरांजनेन शुद्धात्मा दर्पणेन प्रकाशयेत् ।
फलदः पुत्रमान् मर्त्यः ताम्बूलात् स्वर्गमाप्नुयात् ॥

शिवजी को नीरांजन दिखाने से आत्मा शुद्ध हो जाती, दर्पण दिखाने से अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता, फल देनेवाला पुत्रमान् होता और ताम्बूल अर्पण करनेवाला स्वर्गलोक को प्राप्त होता है।

छत्र—

छत्रं दत्त्वा महेशाय नन्दीश्वरसमो भवेत् ।
ततः क्रमात् क्षितिं प्राप्य सार्वभौमो नृपो भवेत् ॥१॥

शिवजी के लिए छत्र अर्पण करनेवाला प्राणी नन्दीश्वर के समान शिवजी का प्रिय गण होता है। इसके बाद क्रमशः फिर मृत्युलोक में आकर चक्रवर्ती राजा होता है ॥ १ ॥

चामर—

दत्त्वा वै चामरं देवं वीज्यते यः शिवः पुरे ।
युगकोटिशतं भुक्त्वा चान्ते राज्यमवाप्नुयात् ॥१॥

जो प्राणी शिवजी के लिए चमर अर्पण करके हाँकता है, वह एक अरब युग तक सुख भोगकर अन्त में राजा होता है ॥१॥

सङ्गीत—

सङ्गीतनृत्यं यः कुर्य्यात् स च सर्वफलं लभेत् ॥१॥

जो मनुष्य शिवजी के समक्ष नृत्य, गीत आदि करता है, वह सब प्रकार के फल पाता है।

वस्त्र—

वासांसि सुविचित्राणि सारवन्ति मृदूनि च ।
धूपितानि शिवं दद्याद्दिक्केशानि नवानि च ॥१॥

यावत्तद्वस्त्रतन्तूनां प्रतिसंख्यासमन्वितम् ।
तावद्वर्षसहस्राणि शिवलोके महीयते ॥ २ ॥

जो मनुष्य मजबूत, मुलायम, नवीन और चित्र-विचित्र प्रकार के वस्त्रों को धूप आदि के द्वारा सुवासित करके शिवजी को अर्पण करता है, तो उस वस्त्र में जितने तन्तु रहते हैं, उतने हज़ार वर्षों तक वह प्राणी शिवलोक में पूजा जाता है ।.१॥२॥

ऋतुफल—

यः पक्वं श्रीफलं नित्य शिवाय विनिवेदयेत् ॥
गुरोर्वा होमयेद्वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ १ ॥

श्रीमद्भिः समहायानैर्भोगान् भुंक्ते शिवे पुरे ।
वर्षाणामयुतं साग्रन्तदन्ते श्रीपतिर्भवेत् ॥२॥

जो मनुष्य नित्य पके हुए बेल के फल शिवजी को अर्पण करता है अथवा गुरु के द्वारा उसका हवन कराता है, उसका फल सुनो—वह प्राणी श्रीमान् पुरुषों के साथ शिवपुर में जाता और दस हज़ार वर्षों तक वहाँ के सुख भोगकर अन्त में धनवान् होता है ॥१॥

एकमाम्रफलं पक्वं यः शम्भोर्विनिवेदयेत् ।
वर्षाणामयुतं भोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥३॥

जो प्राणी एक भी आम का फल शिवजी के अर्पण करता है तो वह दस हज़ार वर्षों तक शिवलोक में विहार करता है ॥३॥

यो दाडिमफलं चैकं दद्यात् विकसितं नवम् ।
शिवाय गुरवे वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥४॥
यावत्तद्बीजसंख्यानं शोभनं परिकीर्त्तितम् ।
तावदष्टयुतन्युच्च शिवलोके महीयते ॥५॥

जो मनुष्य विकसित, नवीन और पके हुए केवल एक अनार के फल को शिवजी को या गुरु को अर्पण करता है, उसका फल सुनो—जितने बीज उस अनार में रहते हैं, उनके अठगुने हज़ार वर्षों तक वह प्राणी शिवलोक में पूजा जाता है ॥३॥

द्राक्षाफलानि पक्वानि यः शिवाय निवेदयेत् ।
भक्त्या वा शिवयोगिभ्यस्तत्पुण्यफलं शृणु ॥६॥
यावत्तत्फलसंख्यानमुभयोर्विनिवेदितम् ।
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥७॥

जो मनुष्य पके हुए अंगूर के फल शिवजी को अथवा शिवभक्तों को प्रदान करता है, वह उन फलों की संख्या के हज़ार वर्षों तक शिवलोक में पूजा जाता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

यो नारंगफल पक्वं शिवाय विनिवेदयेत् ।
अष्टलक्षं महाभोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥८॥

निवेद्य भक्त्या शर्वाय प्रत्येकं च फले फले ।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥९॥

जो प्राणी पकी हुई नारंगी के फल शिवजी को अर्पण करता है, वह विविध प्रकार के भोगों को भोगता हुआ आठ लाख वर्षों तक शिवलोक में आनन्द करता है। इसी तरह कोई भी फल शिवजी को अर्पण करनेवाला प्राणी दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में सुख भोगता है ॥ ८ ॥ ९ ॥

प्रदक्षिणा और नमस्कार—

पूजयित्वा महादेवं लिङ्गरूपिणमव्ययम् ।
प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा प्रणमेद्दशपंच च ॥

(ब्रह्मवैवर्ते)

ब्रह्मवैवर्त में लिखा है कि लिङ्ग-रूप अविनाशी महादेव की पूजा करके तीन परिक्रमा करे और दस या पाँच बार नमस्कार करे ।

लिङ्गं समर्चितं दृष्ट्वा यः कुर्यात्प्रणतिं सकृत् ॥
संदेहो जायते तस्य पुनर्देहनिबंधने ॥ (काशीखण्डे)

काशीखण्ड में कहा है कि पूजन के अनन्तर शिवलिङ्ग का दर्शन करके जो मनुष्य नमस्कार करता है, फिर उसके जन्म होने में सन्देह है, अर्थात् वह मोक्ष को प्राप्त होता है ।

यद्वृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः ।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३॥

(शिवमहिम्न)

इसी तरह महिम्न में भी कहा है—हे बरदानोन्मुख ! जिसने त्रैलोक्य मात्र को अपने दासों के समान बना दिया था, ऐसे बाणासुर ने देवराज इन्द्र की भी बड़ी भारी समृद्धि को नीचे कर दिया। सो आपके चरणों को प्रणाम करनेवाले बाणासुर के विषय में कुछ आश्चर्यजनक बात नहीं है। क्योंकि आपको सिर झुकाना किसके अभ्युदय के लिए नहीं होता, अर्थात् सभी प्रणाम करने वाले का महोदय होता है ॥१३॥

उत्थायोत्थाय अष्टाङ्गान्प्रणामान्विंशदुत्तरान् ।
यः करिष्यति यत्नेन स पापेभ्यो विमुच्यते ॥

(स्कान्दे)

स्कन्दपुराण में कहा है कि जो पुरुष वारम्बार शिवजी को उत्साह (श्रद्धा) पूर्वक बीस से एक अधिक (इक्कीसबार) अष्टांग प्रणाम करता है, वह पापों से छूट जाता है।

पशोः पशुपतेरग्रे दण्डवत्पतितस्य हि ।
पतिता पातकाः सर्वे नोत्तिष्ठंति कदाचन ॥

(काशीखण्डे)

पशुपति के आगे दण्ड की तरह गिरनेवाले मनुष्य के सब पाप नष्ट हो जाते हैं। वे फिर कभी भी नहीं उठते।

शिवार्चनं सदा कार्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृभिः ।
प्राक्पश्चिमोदगास्यैस्तु प्रातःसायं निशासु च ॥

बृहस्पति ने कालभेद से दिशा का भेद कहा है। मनुष्य को भोग मोक्ष का देनेवाला शिव-पूजन प्रातः काल पूर्वाभिमुख, सायंकाल को पश्चिमाभिमुख और रात्रि के समय उत्तराभिमुख होकर करना चाहिए।

प्रदक्षिणानमस्कारौ सर्वाभीष्टप्रदावुभौ ।
पूजांते च सदा कार्यौ भोगमोक्षार्थिभिर्नरैः ॥१॥

सनत्कुमारसंहिता में कहा है कि परिक्रमा और नमस्कार, ये दोनों सब मनोर्थ पूरे करते हैं। इस लिए मनुष्यों को पूजा के अन्त में भोग तथा मोक्षकी प्राप्तिके लिए सदा प्रदक्षिणा करनी चाहिए।।१।

शिवं प्रदक्षिणीकृत्य सव्यासव्यविधानतः ।
यत्फलं समवाप्नोति तन्मे निगदतः शृणु ॥१॥

राजन्प्रदक्षिणैकेन मुच्यते ब्रह्महत्यया ।
द्वितीयेनाधिकारित्वं तृतीयेनेन्द्रसंपदम् ॥२॥

(सनत्कुमारसंहितायां)

बृहन्नारदीयपुराण में कहा है कि सव्य-अपसव्य की विधि से शिवजी की परिक्रमा करने से जो फल प्राप्त होता है, वह मैं कहता हूँ, श्रवण करो ॥ १ ॥ हे राजन् ! एक परिक्रमा करने से मनुष्य के ब्रह्महत्या की निवृत्ति होती है, दूसरी से मनुष्य अधिकारी पद पाता है और तीसरी से इन्द्र के भी ऐश्वर्य को पा लेता है ॥२॥

प्रदक्षिणं द्विजः कुर्यात्पंच ब्रह्माणि वै जपन् ।

(कूर्मपुराणे)

'सद्योजातादि' पाँच मंत्र जपता हुआ द्विज शिवजी की परिक्रमा करे ।

प्रातः शिवार्चने देवि दश कार्याः प्रदक्षिणाः ।
मध्याह्ने द्वादशाथैकादश सायाह्नि सादरम् ॥

(शिवरहस्ये)

हे देवि ! प्रातःकाल शिव-पूजा में दस परिक्रमा करनी चाहिए । मध्याह्न में बारह और सायंकाल में प्रेमपूर्वक (श्रद्धा युक्त) ग्यारह परिक्रमा करे ।

प्रसाद-महिमा ।

ऋषय ऊचुः ।

अग्राह्यं नैव नैवेद्यमिति पूर्वं श्रुतं वचः ।
ब्रूहि तन्निर्णयं विल्वमाहात्म्यमपि सन्मुने ॥१॥

एक समय ऋषियों ने सूतजी से पूछा कि मैंने बहुतों के मुख से सुना है कि शिव-नैवेद्य अग्राह्य नहीं है, सो आप इसका निर्णय और विल्व के माहात्म्य के विषय में भी कहिए ॥१॥

सूत उवाच ।

शिवभक्तः शुचिः शुद्धः सद्व्रती दृढनिश्चयः ।
भक्षयेच्छिवनैवेद्यं त्यजेदग्राह्यभावनाम् ॥२॥

पवित्र, शुद्ध और दृढ़ निश्चयवाले शिव-भक्त को चाहिए कि "शिव-नैवेद्य त्याज्य है" इस भावना को छोड़कर शिवजी के प्रसाद को ग्रहण करे ॥२॥

देवस्वं देवताद्रव्यं नैवेद्यं च निवेदितम् ।
चण्डद्रव्यं बहिःक्षिप्तं निर्माल्यं षड्विधं स्मृतम् ॥॥१॥

देवता की सम्पत्ति, देवता का द्रव्य, नैवेद्य, निवेदित, चण्ड-द्रव्य और बाहर फेंका हुआ (पुष्प पत्र आदि) ये छ प्रकार

के निर्माल्य होते हैं ॥ १ ॥ देवता का धन, ग्राम, दासी और दास तथा सुवर्ण, चाँदी और रत्न आदि, ये देवद्रव्य कहलाते हैं ॥ २ ॥ देवता के निमित्त जो भी पत्र, पुष्प, फल, जल, अन्न, पान (दुग्ध आदि) संकल्प (दान) कर दिया जाता है। वह नैवेद्य कहलाता है ॥ ३ ॥ ये तीन प्रकार के निर्माल्य साधारण पुरुषों के लिये अग्राह्य माने गये हैं। और ऊपर बतलाये शिव-द्रव्य का हरण करनेवाला प्राणी नरक में जाता है ॥ ४ ॥ शिवजी के द्वारा उपयुक्त माला, चन्दन और अन्न-पान आदि निवेदित कहे गये हैं। ये सब पापों के हरनेवाले हैं ॥ ५ ॥ वाणलिङ्ग, लौहलिङ्ग (धातुओं से निर्मित) सिद्धलिङ्ग, स्वयं उत्पन्न लिङ्ग तथा सब प्रकार की प्रतिमाओं में चण्डाधिकार नहीं माना जाता ॥ ६ ॥ जो निर्माल्य बाहर फेंक दिया जाता, वह भी अन्य द्रव्य होने से अग्राह्य होता है। क्योंकि उस पर सर्वदा पिशाचों का अधिकार रहता है ॥ ७ ॥

जिस भक्त में विशेष भक्ति हो, उसके लिए न तो चण्डाधिकार लगता और न किसी प्रकार का दोष ही लगता है। किन्तु जिसमें (विशेष नहीं) साधारण भक्ति रहती है, उस पुरुष को चण्डाधिकार होता ही है * ॥ ८ ॥

---

* देवस्वं ग्रामभूम्यादि दासीदासचतुष्टयम् ।
हेमरूप्यैकरत्नादि देवद्रव्यमिति स्मृतम् ॥ २ ॥

बौधायनः—

अथातो महादेवस्य पादोदकं व्याख्यास्यामो भगवतः। पादौ प्रक्षाल्य शंखमापूर्य गन्धपुष्पादिभिरभ्यर्च्य न कद्रुदायेत्यादि रुद्रायेत्यादि द्वाभ्यां मार्जनं कृत्वा ऋतं च सत्यं परं ब्रह्मेति प्राशयेत् एवं कुर्यात्स कुलजान् दश पूर्वान् दशापरान् आत्मानञ्च तारयेत्।

अब यहाँ से हम भगवान् शिवजी के पादोदक की व्याख्या करेंगे। दोनों पावँ धोकर, शंख को जलसे परिपूर्ण करके

संकल्पितं यद्देवाय पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
अन्नपानादि तत्सर्वं नैवेद्यमिति कीर्तितम् ॥ ३ ॥
एतत्त्रिविधनिर्माल्यमनर्हमिति कथ्यते।
शिवद्रव्यापहारेण नरकं यात्यसौ जनः ॥ ४ ॥
शिवोपभुक्तस्रग्गन्धमन्नपानादिकन्तथा।
निवेदितमिति प्रोक्तं सर्वपापहरं परम् ॥ ५ ॥
बाणलिङ्गे च लौहे च सिद्धलिङ्गे स्वयंभुवि।
प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डाधिकृतो भवेत् ॥ ६ ॥
बहिःक्षिप्तमनर्हं स्यादन्यद्रव्यत्वकारणात्।
पिशाचानां च सर्वेषामधिकारोऽत्र सर्वदा ॥ ७ ॥
यत्र भक्तिर्विशेषा स्यान्न चण्डो नैव दूषणम्।
यत्रैव भक्तिसामान्यं तत्र चण्डो भविष्यति ॥ ८ ॥

गन्ध-पुष्प आदि से पूजन कर 'कद्रुद्राय' तथा 'रुद्राय' इत्यादि, इन दो मंत्रों से मार्जन करके 'ऋतं च सत्यं परं ब्रह्मेति' ऐसा कह कर आचमन करे। जो मनुष्य ऐसा करता है, वह अपने कुलके दस पूर्वपुरुषों और दस आगे के पुरुषों को तथा अपने को तार देता है।

रुद्रोपनिषद् ।

शिवं सर्वदैव साम्बं हृदिस्थं द्वादशांगुलं लिङ्गरूपिणं तेनैव मोदते बाह्यं चेन्द्रनीलमणिमयन्तद्धारयन्नेव पंचाक्षरेण प्रपूजयति शिव शिवेति व्याहरन्नेव भगवान् लक्ष्म्या सह प्रेमाश्रून् विमुंचन्नेव लिङ्गाग्रतो वै नृत्यति हवा आनन्दनिर्भरेण शिवस्य नैवेद्यं च न तद्व्याहरन्नेव भक्षयति यो वाऽन्योपि ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यो वा शूद्रोऽपि शिवस्य नैवेद्यं भुंजीत समतीत्यैव दुःखं सर्वमैश्वर्यमाप्नोति।

(निर्माल्यरत्नाकरे)

अन्तरिक्षंति तं जनो रुद्रं परो मनीषया गृभ्णन्ति जिह्वया स समिति। (ऋग्वेद)

रुद्रभुक्तं भुंजीत रुद्रपीतं पिबेत रुद्राघातं जिघ्रेत। रुद्रेणात्तमश्नंति रुद्रेण पीतं पिबन्ति रुद्राघ्रातं जिघ्रति तस्माद्ब्राह्मणाः प्रशांतमनसो निर्माल्यमेव भक्षयन्ति। (जाबालउपनिषद्)

दृष्ट्वापि शिवनैवेद्यं यान्ति पापानि दूरतः ।
भुक्ते तु शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ॥ ३ ॥

शिवनैवेद्य को देखते ही सारे पाप दूर भाग जाते और शिवनैवेद्य को खाने से करोड़ों प्रकार के पुण्य अपने पास दौड़ आते हैं ॥ ३ ॥ (ब्रह्माण्डपुराणे)

अलं यागसहस्रेणाप्यलं यागार्बुदैरपि ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ४ ॥

हज़ारों क्या अरबों यज्ञ करने से कोई लाभ नहीं । एक मात्र शिवनैवेद्य का भक्षण करने से भक्त शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥

यद्गृहे शिवनैवेद्यप्रचारोऽपि प्रजायते ।
तद्गृहं पावनं सर्वमन्यपावनकारणम् ॥ ५ ॥

जिसके घर शिवार्पित नैवेद्य पहुँच जाता है, वह घर परम पवित्र है । बल्कि उसके द्वारा और लोग भी पवित्र हो जाते हैं ॥ ५ ॥

आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा ।
भक्षणीयं प्रयत्नेन शिवस्मरणपूर्वकम् ॥ ६ ॥

यदि शिवनैवेद्य मिल जाय तो उसे लेकर माथे चढ़ाये और शिवजी का स्मरण करता हुआ यत्न से खाय ॥ ६ ॥

आगतं शिवनैवेद्यमन्यदग्राह्यमित्यपि ।
विलंबे पापसम्बन्धो भवत्येव हि मानवे ॥ ७ ॥

मिलते हुए शिवनैवेद्य को अग्राह्य मानकर भक्षण करने में देर करनेवाले को पाप का भागी बनना पड़ता है ॥ ७ ॥

न यस्य शिवनैवेद्यग्रहणेच्छा प्रजायते ।
स पापिष्ठो गरिष्ठः स्यान्नरकं यात्यपि ध्रुवम् ॥ ८ ॥

जिसे शिवनैवेद्य ग्रहण करने की इच्छा नहीं होती, वह बड़ा पापी होता और उसे नरक में जाना पड़ता है ॥ ८ ॥

हृदये चन्द्रकान्ते च स्वर्णरूप्यादिनिर्मिते ।
शिवदीक्षावता भक्तेनेदं भक्ष्यमितीर्यते ॥ ९ ॥

हृदय में चन्द्रकान्त मणि, सुवर्ण अथवा चाँदी के बने यंत्र (अभूषण) को धारण करनेवाले शिव-भक्तको चाहिए कि वह शिव-नैवेद्य को अवश्य खाय । ऐसा बहुत स्थानों पर कहा गया है ॥९॥

शिवदीक्षान्वितो भक्तो महाप्रसादसंज्ञकम् ।
सर्वेषामपि लिंगानां नैवेद्यं भक्षयेच्छुभम् ॥ १० ॥

शिवदीक्षा ग्रहण किये हुए भक्त को चाहिए कि सर्व प्रकार के लिङ्गों के महाप्रसाद का भक्षण करे । क्योंकि वह बड़ा पवित्र वस्तु है ॥ १० ॥

अन्य दीक्षायुजां नृणां शिवभक्तिरतात्मनाम् ।
श्रृणुध्वं निर्णयं प्रीत्या शिवनैवेद्यभक्षणे ॥११॥

शिवदीक्षा के अतिरिक्त और प्रकार की दीक्षा से दीक्षित, किन्तु शिवभक्ति में मन लगानेवाले भक्तों के लिए नैवेद्यभक्षण सम्बन्धी निर्णय भी सुन लो ॥११॥

शालग्रामोद्भवे लिङ्गे रसलिङ्गे तथा द्विजाः ।
पाषाणे राजते स्वर्णे सुरसिद्धप्रतिष्ठिते ॥१२॥

शालग्रामी से जिस लिङ्ग की उत्पत्ति हुई हो, पारे से जो मूर्ति बनायी गयी हो, जो पाषाण निर्मित हो या सोने-चाँदी से बनी हो अथवा किसी देवता तथा सिद्ध के हाथों जिस प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई हो ॥ १२ ॥

काश्मीरे स्फाटिके रात्ने ज्योतिर्लिङ्गेषु सर्वशः ।
चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शंभोर्नैवेद्यभक्षणम् ॥१३॥

काश्मीर में जिस लिङ्ग की उत्पत्ति हुई हो, स्फटिकमणि तथा रत्न से जिस मूर्ति का निर्माण हुआ हो और जिन लिङ्गों की द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में गणना है, उन शिवलिङ्गों के नैवेद्य भक्षण करने का फल चान्द्रायणव्रत के समान कहा गया है ॥१३॥

ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत् ।
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति ॥१४॥

चाहे कोई मनुष्य ब्रह्महत्यारा ही क्यों न हो, यदि वह पवित्र होकर शिवनिर्माल्य को धारण करता और नैवेद्य का भक्षण करता है तो तुरन्त उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१४॥

चण्डाधिकारो यत्रास्ति तद्भोक्तव्यं न मानवैः ।
चण्डाधिकारो नो यत्र भोक्तव्यं तच्च भक्तितः ॥ १५ ॥

जहाँ कि चण्डाधिकार माना गया है, वहाँ का नैवेद्य न खाना चाहिए, किन्तु जहाँ चण्डाधिकार नहीं है, वहाँ का नैवेद्य भक्ति पूर्वक खाना चाहिए ॥ १५ ॥

वाणलिङ्गे च लौहे च सिद्धलिङ्गे स्वयंभुवि ।
प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डोधिकृतो भवेत् ॥१६॥
(शिवपुराणे)

* वाणलिङ्ग, लौहलिङ्ग, सिद्धलिङ्ग, स्वयं उत्पन्न लिङ्ग तथा सब प्रकार की प्रतिमाओं में चण्डाधिकार नहीं माना जाता ॥१६॥

---

* नर्मदाजलमध्यस्थं वाणलिंगमितिस्थितं वाणासुरार्चितं लिंग वाण लिंगं तदुच्यते ॥१॥

नवेद्यं पुरतो न्यस्तं दर्शने स्वीकृतं मया ।
रसान्भक्तस्य जिह्वाग्रादश्नामि कमलोद्भव ॥१॥

(स्कान्दे)

शिवजी कहते हैं—हे ब्रह्मन् ! सामने लाये हुए नैवेद्य को दर्शन करके ही मैं स्वीकार कर लेता हूँ और उसके रसों को भक्तों की जिह्वा से खाता हूँ ॥१॥

निर्माल्यं देवदेवस्य चान्द्रायणशताद्वरम् ।
श्रद्धया परया तस्माद्भोक्तव्यं तद्द्विजातिभिः ॥१॥
लोभान्न धारयेच्छंभोर्निर्माल्यं न च भक्षयेत् ।
न स्पृशेदपि पादेन लंघयेन्नापि नारद ॥२॥

(आदित्यपुराणे)

आदित्यपुराण में श्रीकृष्णजी नारद से कहते हैं कि देव-देव शिवका निर्माल्य सैकड़ों चान्द्रायण से भी श्रेष्ठ है । इस लिए द्विजाति मात्र को चाहिए कि परम श्रद्धा के साथ उसे खायँ ॥१॥ लोभवश शिवनिर्माल्य रक्खे नहीं, बल्कि खाजाय । उसे पैर से न छुवे और लाँघे भी नहीं ॥२॥

निर्माल्यं निर्मलं शुद्धं निर्मलत्वादनिन्दितम् ।
तस्मादभोज्यं निर्माल्यं प्राकृतैरशिवात्मकैः ॥१॥

अशुद्धात्मा शुचिर्ल्लोभादद्भुतम्पावनं परम् ।
भक्षयेन्नाशमायाति शूद्रो ह्यध्ययनादिवत् ॥२॥

(शिवपुराणे)

शिवनिर्माल्य शुद्ध और मल रहित वस्तु है और निर्मल होने के कारण वह प्रशंसनीय है। इस लिए वह नीच और अपवित्र विचारवाले मनुष्यों के खाने योग्य वस्तु नहीं है ॥ १ ॥ जो अपवित्र मनवाला अपवित्र मनुष्य लोभ वश परम पवित्र शिवनिर्माल्य का भक्षण कर लेता है तो वह नष्ट हो जाता है। जैसे शूद्र अध्ययन, तप आदि करने से नष्ट होते हैं ॥२॥

मदीयभुक्तं निर्माल्यं पादाम्बु कुसुमं जलम् ।
धर्ममर्थञ्च कामं च मोक्षं च ददते क्रमात् ॥१॥
मल्लिङ्गधारिणो लोके दशैका मत्परायणाः ।
मदेकशरणास्तेषां योग्यं नैवान्यजन्तुषु ॥२॥
पत्रं पुष्पं फलं तोयमन्नपानाद्यमौषधम् ।
अनिवेद्य न भुञ्जीत यदाहाराय कल्पितम् ॥३॥

(स्कान्दे)

मेरा खाया हुआ निर्माल्य, चरणोदक, पुष्प और जल क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इन चारों पदार्थों को देता है ॥ १ ॥ जो प्राणी त्रिपुण्ड्र आदि को धारण करते, मेरे चिन्ह मेरे

परायण रहते और एक मात्र मेरी शरण आते हैं, उन्हें किसी और योनि में नहीं जाना पड़ता ॥ २ ॥ पत्र, पुष्प, फल, जल, अन्न, पान तथा औषधि आदि कोई भी खाने योग्य वस्तु बिना शिवजी के अर्पण किये न खाय ॥३॥

गंगोदकात्पवित्रन्तु शिवपादोदकादिकम् ।
पीतं वा मस्तकस्थं वा नृणां पापहरं परम् ॥१॥
दृष्टिपूतं पिबेत्सर्वं शिवस्य परमात्मनः ।
तद्वै पापहरं पुत्र किं पुनः पादयोर्जलम् ॥२॥
उपवाससहस्राणि प्राजापत्या युतानि च ।
शिवप्रसादसिक्थस्य कोट्यंशेनापि नो समम् ॥३॥
अलं यागसहस्रेणाप्यलं योगार्बुदैरपि ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥४॥
दृष्टेऽपि शिवनैवेद्ये यान्ति पापानि दूरतः ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ॥५॥

(ब्रह्माण्डपुराणे)

गङ्गाजल से भी पुनीत शिवजी का पादोदक होता है। उसे पीने अथवा माथे पर चढ़ाने से मनुष्यों के सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ यदि शिवजी को दिखाकर याने अर्पण

कर के जल आदि सब चीजें पीवे तो सब पाप दूर हो जाते हैं। फिर शिव-पादोदक न भी पिये तो कोई हानि नहीं ॥ २ ॥ हजार उपवास व्रत और दस हजार प्राजापत्य यज्ञ शिवनैवेद्य के एक तन्दुल पका हुआ एक दाना के करोड़वें हिस्से के बराबर भी नहीं हो सकते ॥ ३ ॥ हजार यज्ञ और अरब यज्ञ से भी जो नहीं हो सकता, एक मात्र शिवनिर्माल्य का भक्षण करने से प्राणी शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ शिवनैवेद्य को देखने मात्र से पाप दूर भाग जाते हैं और उसका भक्षण करने से करोड़ों पुण्य अपने पास दौड़ आते हैं ॥५॥

पुष्पं फलं सुगंधं च वस्त्राण्याभरणानि च।
शिवार्पितानि स्वीकुर्यादन्यथा किल्विषी भवेत् ॥
(लैङ्गे)

लिङ्गपुराण में लिखा है कि पुष्प, फल, सुगंधित, द्रव्य (वगैरह) वस्त्र, आभूषणादि सब पदार्थ शिवजी के चढ़ाये हुए ही ग्रहण करे। ऐसा नहीं करने से पाप होता है।

मद्यमन्नं प्रयत्नेन निवेद्याश्नाति यः सदा।
स भूपालः सर्ववेत्ता भवत्येव हि सर्वथा ॥
(ब्रह्मांडे)

निर्मलत्वाच्च निर्माल्यं नृणां नैर्मल्यकारणम् ।
यद्यदात्महितं लोके तत्तद्द्रव्यं परं च यत् ॥ २ ॥
शिवलिङ्गार्पितं कुर्यात्तत्र तुष्यति शंकरः ॥ ३ ॥

ब्रह्मांडपुराण में कहा है कि जो मनुष्य मेरे अर्थात शिवलिङ्ग को यत्न से अर्पण करके भोजन करता है तो वह सर्वथा सर्वज्ञ और पृथ्वी का पालन करनेवाला राजा होता है ॥१॥ निर्मल होने से हीं शिवार्पित द्रव्य निर्मालय कहलाता है । वह मनुष्यों के मल दूर कर देता है, लोक में जो पदार्थ अपने को प्रिय और श्रेष्ठ हो सो पदार्थ शिवजी को अर्पण करे । इसी से शिवजी प्रसन्न होते हैं ॥ ३ ॥

यदक्षींदुर्ल्लोके पचति विविधं त्वौषधिगणम्
तथैवान्नं वह्नी रविरपि पुनातीह सकलम् ।
विधिर्यद्रेतोजो जनयति जगत्स्थावरचरम्
सुवर्णं यद्रेतः सुरनरगणा बिभ्रति तनौ ॥ १ ॥

जिस (शिवजी) का नेत्ररूप चन्द्रमा लोक में अनेक प्रकार की औषधियों के समूहको पकाता है, दूसरा नेत्र अग्नि रूपसे अन्न पचाता है, तीसरा नेत्र सूर्य सब को पवित्र करता है जिसके वीर्य से उत्पन्न ब्रह्मा स्थावर, जंगम जगत् को

उत्पन्न करते हैं और जिसके वीर्य से उत्पन्न हुए सोने को सब देवता और मनुष्य शरीर में धारण करते हैं—

श्रुतिर्यड्डुक्काजा मनसि दधते वाचि च बुधाः
यदङ्घ्र्युत्थं चक्रं हरिरवति बिभ्रत्त्रिभुवनम् ।
तथा धत्ते नेत्रं हरयजनसंपूतमनिशम्
क ईष्टे भोक्तुं तत्परमशिवसंपर्करहितम् ॥

जिसके डमरू बजाने से उत्पन्न हुये वेदों को पण्डित लोग अपनी वाणी और मन में धारण करते हैं, जिसके चरण से उत्पन्न हुए चक्रको धारण किये विष्णु तीनों लोकों की रक्षा करते हैं और उन्हीं शिवजी के पूजन करने से पवित्र हुए नेत्र को निरंतर विष्णु ने धारण किया है, ऐसे परम शिवजी के संपर्क से रहित पदार्थ का उपभोग कौन कर सकता है ।

उपवाससहस्राणि प्राजापत्या युतानि च ॥ ३ ॥
शिवार्पितं विना भुंक्ते सद्यो भवति किल्विषी ॥ ४ ॥

हजार प्राजापत्य (बारह हजार मंत्र जपको प्राजापत्य कहते हैं) को दस हज़ार से गुणा किया तो बारह करोड़ हुआ, इनका करनेवाला भी शिवजी को अर्पण किये बिना भोजन करे तो तत्काल पाप का भागी होता है ॥ ४ ॥

शम्भोर्निर्माल्यकं शुद्धं भुञ्जीयात्सर्वतो द्विजः ।
अन्यदेवस्य नैवेद्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ १ ॥

(सूतसंहिता)

सूतसंहिता में कहा है कि द्विज संज्ञावालों को शिवजी का शुद्ध निर्माल्य भोजन करना चाहिये और किसी देव नैवेद्य भोजन करनेवाला चान्द्रायण व्रत करने से शुद्ध होता है ॥१॥

शालग्रामशिलालिङ्गे यः करोति ममार्चनम् ।
तेनार्चितः कार्तिकेय युगानामेकसप्ततिः ॥ २ ॥

भगवान् शिवजी कहते हैं—हे कार्तिकेय ! जो पुरुष शालग्राम रचित लिङ्ग में एक बार भी मेरा पूजन करे तो उसको एकहत्तर युगों के पूजन का फल प्राप्त होता है ॥ १ ॥

गङ्गानङ्गरिपोर्जटाविगलिता तन्म पुष्पं शशी
केशात्तस्य वियत्ततो विगलिता वृष्टिर्जगज्जीवनी ।
रुद्रोऽग्निः श्रुत एव सर्वमशनं तज्जिह्वया याचते ।
निर्माल्यं तु विहाय च क्षितितले जीवन्ति के पापिनः ॥

जिन शिवजी की जटा से गंगाजी उत्पन्न हुई हैं, चन्द्रमा जिनके मस्तक का फूल है, जिसकी केशराशिसे आकाश बना है और उस आकाश से जगत् को जीवन प्रदान करनेवाली वृष्टि होती है.

जो रुद्र भगवान् अग्नि होकर सब प्रकार की वस्तुयें खाते हैं, ऐसे शिवजी के निर्माल्य को त्याग कर जीनेवाले कौन पापी होंगे अर्थात् कोई नहीं।

शिवपादोदकमहिमा—

गङ्गा पुष्करनर्मदा च यमुना गोदावरी गोमती
गङ्गा द्वारवती प्रयागवद्री वाराणसीसिन्धुषु।
रेवासेतुसरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभांडोदरे
तीर्थस्नानसहस्रकोटिफलदं श्रीशम्भुपादोदकम्॥

(स्कान्दे)

गंगा, पुष्कर, नर्मदा, यमुना, गोदावरी, गोमती, गंगा, द्वारिका, प्रयाग, बद्रीनारायण, वाराणसी (काशी), समस्त समुद्र, रेवा, सेतुबन्ध रामेश्वर, सरस्वती आदि ब्रह्माण्ड में जितने भी तीर्थ हैं, उनमें स्नान करने से जो फल होता है, उससे हजारों और करोड़ों गुना अधिक पुण्य शिवपादोदक के पीने से होता है।

षोडशोपचारपूजनम्।

आवाहनासने पाद्य मर्घ्यमाचमनीयकम्।
स्नानं वस्त्रोपपवीतं च गंधपुष्पं च धूपकम्॥
दीपमन्नं नमस्कारः प्रदक्षिणविसर्जने॥

"षोडश" यह आर्ष प्रयोग है. षोडश अर्थात् सोलह उपचार।

आवाहन (१) आसन (२) पाद्य (३) अर्घ्य (४) आचमन (५) स्नान (६) वस्त्र (७) जनेऊ (८) चंदन (९) पुष्प (१०) धूप (११) दीप (१२) नैवेद्य (१३) नमस्कार (१४) परिक्रमा (१५) विसर्जन (१६) ये ही सोलहों उपचार हैं।

ध्यानं च स्वासनं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
स्नानं वस्त्रोपवीतं च भूषणानि तथैव च ॥ १ ॥
गंधं पुष्पं तथा धूपं दीपमन्ननिवेदनम् ।
प्रदक्षिणनमस्कारौ ह्युपचारास्तु षोडश ॥ २ ॥
(सिद्धान्तशेखरे)

ध्यान (१) आसन (२) पाद्य (३) अर्घ्य (४) आचमन (५) स्नान (६) वस्त्र (७) यज्ञोपवीत (८) आभूषण (९) चन्दन (१०) पुष्प (११) धूप (१२) दीप (१३) नैवेद्य (१४) परिक्रमा (१५) नमस्कार (१६) ये भी सोलह उपचार माने गये हैं ॥ १ ॥ २ ॥

पंच प्रकार—

पूजाभेदेन यजनं पंचधा परिकीर्तितम् ।
आराधनेऽर्चनं पूजा यागोऽर्हा चेति पंचधा ॥३॥ (स्कांदे)

पूजा भेद से शिवलिङ्ग का पूजन करना पाँच प्रकार का कहा है आराधन (१) अर्चन (२) पूजा (३) याग (४) अर्हा (५) पूजन के ये पाँच भेद मुनीश्वरों ने कहा है ॥ ३ ॥

(१) * आराधन—दीपदर्शन पर्यन्त पूजन मुक्ति को देने-वाला आराधना है।

(२) अर्चन—नैवेद्य पर्यन्त पूजन का नाम अर्चन है।

(३) पूजा—ग्रामादिक में उत्सव पर्यन्त पूजन करने को सब सुखों को देनेवाली पूजा कहा जाता है।

(४) याग—नृत्य पर्यन्त किया हुआ पूजन राज्य और देश को ऋद्धि से पूर्ण करनेवाला याग पूजन कहा जाता है।

(५) अर्ह—ब्राह्मणों को भोजन कराने पर्यन्त पूजन का नाम अर्ह पूजा है, यह सब शान्ति को देनेवाली है।

अष्टोपचार—

गंधः पुष्पं धूपं च दीपमन्ननिवेदनम्।
ताम्बूलं च नमस्कारः प्रदक्षिणाष्टमापने ॥ (शैवागमे)

चंदन (१) पुष्प (२) धूप (३) दीप (४) नैवेद्य (५) ताम्बूल (६) नमस्कार (७) और परिक्रमा ये अष्टोपचार कहे गये हैं।

इति।

---

* आराधनं तु दीपांतं मुनीनां मुक्तिदायकम्।
अर्चनं स्यान्नविप्यांतं मुमुक्षोर्मुक्तिदायकं ॥
पूजोत्सवांता विज्ञेया ग्रामादौ सर्वसौख्यदा।
यागो नृत्यांतको ज्ञेयो राज्यराष्ट्रसमृद्धिकृत् ॥ (स्कान्दे)